अप्रैल 2025
*वर्ष 39 संख्या 4*
मूल्य 5 रुपये

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी–लेनिनवादी) की केन्द्रीय कमेटी का मुखपत्र

# प्रतिरोध का स्वर

भारतीय सरकार द्वारा समर्पण के खिलाफ सावधान रहें!

## ट्रंप का टैरिफ युद्ध महंगे अमेरिकी उत्पादों को अन्य देशों पर थोपना है

साम्राज्यवाद के गहराते आर्थिक संकट को ऋण आधारित आर्थिक वृद्धि से नहीं रोका जा सका, जो 2008 में वित्तीय आर्थिक संकट के विस्फोट के बाद से अधिकांश साम्राज्यवादी देशों की अर्थव्यवस्थाओं की विशेषता रही है। अग्रणी साम्राज्यवादी शक्ति, अमेरिका के ऋण में तीव्र वृद्धि हुई जो फरवरी 2025 तक 36.22 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच गया, जो इसके सकल घरेलू उत्पाद का 121 प्रतिशत से अधिक है। ऋण में निरंतर वृद्धि व्यापार घाटे में वृद्धि के साथ–साथ सरकार द्वारा एकत्र राजस्व पर बढ़ते घरेलू व्यय में निहित है। वर्ष 2023 के अंत तक, अमेरिकी राष्ट्रीय ऋण 33.1 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर था जो वर्ष 2024 के अंत तक बढ़कर 35.46 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया, जो 2.35 ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर की वृद्धि है। यूएस ब्यूरो ऑफ इकोनॉमिक एनालिसिस के अनुसार वर्ष 2024 में अमेरिकी व्यापार घाटा 918.4 बिलियन अमेरिकी डॉलर था। निर्यात 3,191.6 बिलियन अमेरिकी डॉलर था जबकि आयात 4110.0 बिलियन अमेरिकी डॉलर था, दोनों में 2023 की तुलना में वृद्धि हुई थी लेकिन आयात में अधिक वृद्धि हुई थी। इससे स्पष्ट है कि अमेरिकी ऋण में 2.35 ट्रिलियन डॉलर की वृद्धि में 0.918 ट्रिलियन डॉलर व्यापार घाटे के कारण थी जबकि शेष राजस्व की तुलना में अधिक सरकारी व्यय से हुई। इस बढ़ते कर्ज ने ऋण पर ब्याज भुगतान का बोझ बढ़ा दिया है और कुछ लोगों का दावा है कि ब्याज भुगतान अमेरिकी के विशालकाय रक्षा व्यय से भी अधिक है।

2024 में राष्ट्रपति पद के लिए अपने अभियान के दौरान, डोनाल्ड ट्रम्प ने टैरिफ (अन्य देशों से आयातित वस्तुओं पर कर) लगाकर व्यापार घाटे को कम करके तथा बेकार के खर्चों को काटकर इस ऋण को कम करने का वायदा किया था। साथ ही अतिधनिकों पर कम करने का वायदा किया था हालांकि इससे सरकारी घाटा और बढ़ेगा। ट्रंप ने एलन मस्क की देखरेख में सरकारी दक्षता विभाग बनाया था, लेकिन यह यूएसएआईडी और विश्वविद्यालयों के वित्त पोषण जैसे व्यय में कटौती और कुछ छोटे विभागों को बंद करने तक ही सीमित रहा। ट्रंप बड़े व्यय को छूने की हिम्मत नहीं करते, क्योंकि वे रक्षा व्यय और कर कटौती बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध हैं। उन्होंने अपना ध्यान व्यापार घाटे को संबोधित करने पर केंद्रित किया है और उन्हें बढ़ते कर्ज का एकमात्र या मुख्य कारण बताया है।

राष्ट्रपति बनने के बाद से ट्रंप ने व्यापारिक साझीदारों पर आयात शुल्क बढ़ाए हैं। उन्होंने तीन मुख्य व्यापारिक साझीदारों– कनाडा, मैक्सिको और चीन पर शुल्क बढ़ाने से शुरुआत की। हालांकि उन्होंने मैक्सिको और आंशिक रूप से कनाडा पर शुल्क रोक दिया, लेकिन चीन के साथ जारी रखा। 2 अप्रैल को ट्रंप ने अमेरिका को देशों के बीच व्यापार को नियंत्रित करने वाले सभी नियमों से मुक्त कर दिया। उन्होंने व्यापार में सभी गैर–टैरिफ कारकों जैसे उत्पादों की कीमतें और उपभोक्ताओं की प्राथमिकताओं को टैरिफ की श्रेणी में गिना है। उन्होंने इन देशों में अमेरिकी उत्पादों पर टैरिफ की गणना व्यापार घाटे को आयात की मात्रा से विभाजित करके की है और उनके द्वारा (गलत) गणना किए गए 'टैरिफ' का 50 प्रतिशत उस देश के उत्पादों पर टैरिफ के रूप में लगाने की घोषणा की है। जैसे भारत के मामले में वर्ष 2024 में अमेरिका को निर्यात 87.4 अरब डॉलर का था जबकि अमेरिका से आयात 41.8 अरब डॉलर था, इस प्रकार अमेरिका का व्यापार घाटा लगभग 45.7 अरब डॉलर था। ट्रंप के फॉर्मूले के अनुसार यह अमेरिकी वस्तुओं पर लगभग 52% टैरिफ के बराबर था और इसलिए 2 अप्रैल को उन्होंने भारत से आयात पर 26% टैरिफ लगाने की घोषणा की। अन्य देशों के मामले में भी यही फॉर्मूला इस्तेमाल किया गया।

ट्रम्प या उनके प्रशासन के अन्य सदस्य चाहे जो भी दावा करें, वास्तविक उद्देश्य श्रम–गहन उत्पादन को अमेरिका में स्थानांतरित करना नहीं है, जिससे अमेरिका में वस्तुओं की कीमतें बढ़ेंगी और अमेरिका के आम लोगों पर आर्थिक बोझ बढ़ेगा। इससे ट्रम्प समर्थक कॉरपोरेट भी बुरी तरह प्रभावित होंगे, जो दूसरे देशों में सस्ते श्रम का शोषण करके भारी मुनाफा कमाते हैं। यह ट्रम्प की घोषणा से स्पष्ट है कि ये टैरिफ तब तक लागू रहेंगे जब तक संबंधित देश अमेरिका के साथ व्यापार समझौता नहीं कर लेता। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वास्तविक उद्देश्य अलग–अलग देशों के साथ व्यापार समझौता करना है, उसी अमेरिका द्वारा दूसरे दौर में दुनिया भर में थोपे गए WTO और उसके नियमों को धिक्कारना। इन व्यापार सौदों का उद्देश्य अलग–अलग देशों को व्यापार को संतुलित करने के लिए पूंजी–गहन महंगे अमेरिकी सामान खरीदने के लिए मजबूर करना है। इसका मतलब है कि वे अपने उत्पादों को अमेरिका में तभी बेच पाएंगे जब वे अमेरिकी सामान खरीदेंगे। यह पूंजीपतियों द्वारा प्रचारित मुक्त व्यापार की जगह जबरन व्यापार है।

ट्रंप का फार्मूला न तो नया है और न ही व्यावहारिक। अमेरिकी अर्थव्यवस्था में लंबे समय तक चले आर्थिक संकट के पिछले दौर में अमेरिका ने अमेरिकी निर्यात बढ़ाने के लिए उभरते जापान और जर्मनी को अमेरिकी डॉलर का मूल्य कम करने के लिए मजबूर किया था। यह सितंबर 1985 में हुआ प्लाजा समझौता था, जिसे अमेरिका इन देशों पर थोप सकता था, क्योंकि वे अमेरिकी प्रभाव में थे। लेकिन अमेरिका अपने वर्तमान मुख्य व्यापारिक प्रतिद्वंद्वी चीन के साथ वैसा व्यवहार नहीं कर सकता। इसके अलावा, चीन का आर्थिक उत्थान अन्य देशों को भी विकल्प देता है। ट्रंप मूर्ख हैं। वह भूल गए हैं कि उस समय विश्व उत्पादन और विश्व व्यापार में अमेरिका की हिस्सेदारी कहीं अधिक थी और कोई भी अन्य देश, यहां तक कि उभरते हुए देश भी, उसके आसपास भी नहीं थे। वर्तमान में ऐसा नहीं है। आज अमेरिका का कुल वैश्विक आयात में केवल 13% और वैश्विक निर्यात में लगभग 10% हिस्सा है। 2023 में विश्व व्यापार में चीन का हिस्सा 5.61 ट्रिलियन डॉलर (3.42 ट्रिलियन डॉलर निर्यात और 2.19 ट्रिलियन डॉलर आयात) था, जबकि अमेरिका का व्यापार 4.86 ट्रिलियन डॉलर (1.86 ट्रिलियन डॉलर निर्यात और 3.0 ट्रिलियन डॉलर आयात) था। ये कुल 32 ट्रिलियन डॉलर के विश्व व्यापार का हिस्सा थे। यदि अमेरिका इतना मूर्ख है कि इस दांव को बढ़ा–चढ़ाकर खेलता है, और ट्रम्प को तब तक ऐया नहीं कर पायेंगे जब तक कि शक्तिशाली अभिजात वर्ग का समर्थन न हो, तब उसे यह पता चल सकता है, जैसा कि आई.एम.डी. बिजनेस स्कुल के प्रो. सिमोन कॉर्नेट ने चेतावनी दी है, न केवल डी–डॉलरीकरण बल्कि दुनिया का डी–अमेरिकनीकरण भी हो रहा है।

अमेरिकी प्रशासन का मुख्य निशाना चीन है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि चीन आज अमेरिकी बाजारों पर पहले जितना निर्भर नहीं है। 2018 के बाद से, जब पिछले ट्रम्प प्रशासन ने चीन को टैरिफ झटका दिया था, उसने अपने व्यापार में विविधता लाई है और आज वह अमेरिका की तुलना में आसियान देशों को अधिक निर्यात करता है। 2023 में चीन के कुल 3.42 ट्रिलियन डॉलर निर्यात में 1 ट्रिलियन डॉलर से अधिक आसियान देशों को और लगभग 237 बिलियन डॉलर रूस को थे। अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि (यूएसटीआर) के अनुसार 2024 में चीन से अमेरिका का कुल वस्तु आयात 438 बिलियन डॉलर का था।

बड़ा खतरा भारत सरकार का साम्राज्यवादी शक्तियों के प्रति समर्पण है जो अमेरिकी दबाव के आगे झुकती रही हैं और भारतीय अर्थव्यवस्था और भारतीय लोगों के हितों से समझौता करती है। जब भारतीय युवाओं को बेड़ियों और जंजीरों में बांधकर अमरीका से निर्वासित किया गया, तब भारतीय सरकार की ओर से कोई प्रतिक्रिया न होने से यह स्पष्ट था। ट्रम्प के राष्ट्रपति बनने से संकेत लेते हुए, केंद्र सरकार ने इस वर्ष 1 फरवरी को पेश किए गए अपने बजट में कुछ प्रकार के भारी वाहनों और उनके पुर्जों, फ्लेवर्ड पेय और सौर पैनलों पर टैरिफ कम कर दिए थे, जिसका मुख्य उद्देश्य अमेरिका से आयात बढ़ाने में मदद करना था। तब से उन वस्तुओं पर टैरिफ कम करने के लिए और उपाय किए गए हैं, जो ज्यादातर अमरीका से आती हैं। भारतीय सरकार ने संकेत दिए हैं कि वह अमेरिका के हुक्म के आगे झुकने को तैयार है।

अमेरिका द्वारा 26% टैरिफ लगाने पर कोई प्रतिक्रिया देने के बजाय, भारतीय सरकार ट्रम्प प्रशासन के साथ व्यापार समझौते पर जोर दे रही है। इसका यह अर्थ है कि भारतीय सरकार भारतीय लोगों, विशेषकर किसानों और श्रमिकों के हितों का बलिदान करने को तैयार है। फार्मास्यूटिकल्स को फिलहाल छूट दी गई है, लेकिन ट्रम्प द्वारा फार्मा उद्योग से संबंधित पर्यावरणीय नियमों को ढ़ीला करने के साथ, स्थिति बदल सकती है। व्यापार पर अमेरिकी प्रशासन के समक्ष अपने समर्पण को जीत के रूप में पेश करने के लिए, मोदी के नेतृत्व वाली आरएसएस–भाजपा सरकार अमेरिका की बड़ी टेक फर्मों को चीन से अपना उत्पादन आधार भारत में स्थानांतरित करने के लिए आमंत्रित करके जमीन तैयार कर रही है। भारत सरकार एलन मस्क से दोस्ती बढ़ा रही है, जो भारत में निवेश के लिए अमेरिकी फर्मों तक पहुँचने के लिए ट्रम्प शासन में महत्वपूर्ण आवाज हैं।

भारत पर निश्चित रूप से अमेरिकी वस्तुओं की खरीद बढ़ाने का दबाव होगा। ये मुख्य रूप से रक्षा उपकरणों, कृषि और उच्च तकनीक वाले सामानों के क्षेत्र में होंगे। अमेरिकी रक्षा उपकरण महंगे होंगे। एक अन्य महत्वपूर्ण और संभवतः सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र कृषि उपज का आयात है। भारतीय कृषि पहले से ही संकटग्रस्त है और भारतीय किसान बढ़ते कर्ज में हैं, अमेरिकी कृषि उपज का आयात भारतीय किसानों पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। इसका निश्चित रूप से विरोध किया जाएगा और साथ ही विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों पर भी इसका प्रभाव पड़ेगा। ट्रम्प के साथ 'दोस्ती' के मोदी के दावे की बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ सकती है। भारत के लोगों को इस कीमत पर पैनी नजर रखनी चाहिए क्योंकि यह कीमत भारत की जनता को चुकानी पड़ेगी।

# पंजाब : दलित मजदूरों का भूमि पर अधिकार के लिए जोरदार संघर्ष

28 फरवरी 2025 को, पंजाब में ज़मीन प्राप्ति संघर्ष समिति (जेडपीएससी) के नेतृत्व में एकजुट हुए दलित मजदूरों ने भूमि अधिकारों के लिए अपने लंबे समय से चले आ रहे संघर्ष में एक जोरदार व ऐतिहासिक सफलता हासिल की। अपने साहसिक दावे में, उन्होंने संगरूर शहर के बाहरी इलाके बीड ऐसवान में 927 एकड़ 'बे–चिराग' (परित्यक्त/अनुपस्थित) भूमि पर कब्ज़ा करने का दावा कर दिया। यह भूमि आधिकारिक तौर पर तत्कालीन जींद रियासत के स्वामित्व में थी या इसे 'बेनामी' (अपंजीकृत) संपत्ति के रूप में रखा गया था। अपने अंतिम शासक की मृत्यु के बाद यह बिना किसी कानूनी उत्तराधिकारी के पड़ी हुई थी। राज्य द्वारा इसे नजूल (सार्वजनिक) भूमि घोषित किया हुआ था। पंजाब भूमि सुधार अधिनियम, 1972 के अनुसार ऐसी नजूल जमीनों को दलितों और अन्य भूमिहीन समुदायों के बीच वितरित करने की बार–बार मांग के बावजूद, कोई कार्रवाई नहीं की गई। इस स्थिति में जेडपीएससी ने स्थानीय भूमिहीन लोगों की ओर से इस भूमि पर दावा करने के लिए कदम आगे बढ़ाया।

## इस निर्णायक कार्रवाई के साथ, पंजाब में भूमि संघर्ष एक नए चरण में –

इस कार्रवाई के साथ संघर्ष दलितों के लिए पंचायती (स्थानीय सरकार) भूमि के एक तिहाई हिस्से की लड़ाई से आगे बढ़कर सीधे तौर पर सामंती भूमि संरचनाओं और अनुपस्थित स्वामित्व की जमीनों को चुनौती देने में प्रवेश कर गया है। आंदोलन ने पंजाब भर में 153 और गांवों की भी पहचान की है जहां अनुपस्थित स्वामात्वि वाली भूमि के समान बड़े हिस्से मौजूद हैं। यह भूमि पुनर्वितरण के संघर्ष के लिए और भी बड़ी लड़ाई का मंच तैयार कर रही है।

## जाति–आधारित भूमि असमानता की गहरी जड़ें –

पंजाब में भारत में सबसे गंभीर जाति–आधारित भूमि असमानता है। राज्य की ग्रामीण आबादी (2011 की जनगणना) में दलित 38% हैं। हर एक भारतीय राज्य में दलित अपनी आबादी के अनुपात से बहुत कम भूमि के मालिक हैं। पिछले दशक में, जेडपीएससी और अन्य दलित श्रमिक संगठनों ने पंचायती भूमि पर अपने कानूनी अधिकार का दावा करने के लिए उग्र संघर्षों का नेतृत्व किया है। परन्तु, इन अधिकारों को दबाने के लिए उच्च जाति के भूस्वामियों ने धोखाधड़ी का उपयोग करके, दलितों के बीच से अपने दलालों को पालकर और हिंसक धमकियों के माध्यम से व्यवस्थित रूप से रोका हुआ है।

जेडपीएससी ने यह स्पष्ट बताया है कि पंजाब में 1971 से लागू भूमि सीलिंग अधिनियम के तहत सिंचित भूमि के लिए निर्धारित सीमा 17.5 एकड़ है। इस सीमा का खुलेआम उल्लंघन होता रहा है। प्रोफेसर सुच्चा सिंह गिल द्वारा संपादित 2001 के *'पंजाब में भूमि सुधार'* से पता चलता है कि बड़े भूमि मालिकों ने भूमि सीमा कानूनों को अमल नहीं किया और जो लोग इसके अमल के लिए जिम्मेदार रहे हैं, वही इसका उल्लंघन करते रहे हैं।

## भूमि, गरिमा और प्रतिरोध की राजनीति

हरिन्दर हैप्पी

भूमि स्वामित्व मानव अस्तित्व के लिए मौलिक है, इसकी कमी भारत में गरीबी का मूल कारण है। दलितों के लिए, भूमि के लिए संघर्ष केवल आर्थिक अस्तित्व का सवाल नहीं है – यह सम्मान, आत्म–सम्मान और जाति उत्पीड़न से मुक्ति की लड़ाई का हिस्सा है। विशेष रूप से, दलित महिलाओं को अकसर तब क्रूर दमन का सामना करना पड़ता है जब वे ऊंची जाति के जमींदारों के खेतों से घास/चारा और साग लेने का प्रयास करती हैं। ज़ेडपीएससी कार्यकर्ताओं ने बार–बार इस बात पर जोर दिया है कि भूमिहीनता जाति अधीनता का केंद्र है, और भूमि सुरक्षित करना सदियों से चले आ रहे जाति उत्पीड़न के लिए एक सीधी चुनौती है।

यह आंदोलन पंजाब के भूमि संघर्ष के लंबे और गौरवपूर्ण इतिहास से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। जेडपीएससी नेता मुकेश मलौद ने बताया कि कैसे इस संघर्ष और पिछले आंदोलनों के बीच संबंध जोड़ा गया है। इसमें 18वीं सदी की शुरुआत में बंदा सिंह बहादुर के नेतृत्व में कृषि प्रतिरोध से लेकर 1930 और 40 के दशक के मुज़ारा आंदोलन और 1960 के दशक के नक्सलबाड़ी–प्रेरित भूमि संघर्ष शामिल हैं। यह आंदोलन कांशीराम के नारे के आह्वान कि 'जो ज़मीन सरकारी है, वो ज़मीन हमारी है' का भी अनुसरण करता है।

उन्होंने आगे कहा कि दलित अपनी मांगें उठाने के लिए ऊंची जाति के किसानों पर भरोसा नहीं कर सकते। किसानों के साथ सच्ची एकता तभी उभर सकती है जब दलित असमानता की स्थिति में एकजुटता की उम्मीद उनसे करें। यह तभी हो सकती है जब वे अपनी स्वतंत्र शक्ति का निर्माण करें।

## बेगमपुरा : एक नजरिये का पुनः विकास

एक शक्तिशाली प्रतीकात्मक संकेत पेश करते हुए, कब्जा की गयी भूमि का नाम बदलकर बेगमपुरा – दुःख रहित शहर – कर दिया गया है, जो गुरु रविदास के दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करता है। उन्होंने भी एक ऐसी जगह का सपना देखा था जहां समाज जातिविहीन और वर्गहीन हो। आज, बेगमपुरा उत्सव की आवाज़ के साथ जीवित है – सैकड़ों दलित मजदूर ढोल बजा रहे हैं, भांगड़ा नृत्य कर रहे हैं, क्रांतिकारी नारे लगा रहे हैं, और जातिगत पदानुक्रम के प्रतीकात्मक उलटफेर में चिराग (तेल का दीपक) जला रहे हैं।

यह कार्रवाई न केवल पंजाब के भूमि संघर्ष में एक महत्वपूर्ण मोड़ है, बल्कि दलित आत्मनिर्णय का एक क्रांतिकारी दावा है। हालाँकि, लड़ाई अभी ख़त्म नहीं हुई है। ज़ेडपीएससी और दलितों को सामाजिक विभाजनों के पार व्यापक समर्थन जुटाना होगा, और ऊंची जाति और राज्य की ताकतों द्वारा कड़ी प्रतिक्रिया के लिए तैयार रहना होगा। आशा करनी चाहिये कि यह पंजाब के सबसे उत्पीड़ित समुदायों के लिए भूमि और सम्मान को पुनः प्राप्त करने के लिए एक व्यापक आंदोलन की शुरुआत है और शेष भारत के लिए एक प्रकाशस्तंभ बन जाएगा।

# महिलाओं की मुफ्त बस यात्रा को सीमित करने का विरोध

दिल्ली में जारी महिलाओं के लिए फ्री बस यात्रा का लाभ दिल्ली की "वास्तविक" महिलाओं तक सीमित करने से दिल्ली की अधिकांश महिलाएं फ्री यात्रा से वंचित हो जाएंगी।

मुख्यमंत्री सुश्री रेखा गुप्ता के नेतृत्व वाली दिल्ली सरकार के परिवहन मंत्री श्री पंकज सिंह ने घोषणा की है कि दिल्ली की बसों में फ्री यात्रा का लाभ दिल्ली की 'वास्तविक' (जेन्युइन) महिलाओं को ही दिया जाएगा। आधार कार्ड ,राशन कार्ड देख कर स्मार्ट कार्ड दिया जायेगा ताकि महिलाएं बसों में फ्री यात्रा का लाभ ले सकें।

दरअसल दिल्ली में काम करने वाली अति साधारण महिलाएं विशेषकर औद्योगिक इलाकों में काम करने वाली मजदूर औरतें बहुत कम वेतन प्राप्त करती हैं। इनको न तो फैक्ट्री मालिकों द्वारा नियुक्ति पत्र दिए जाते हैं और न ही सरकार, प्रशासन उन्हें मजदूर के रूप में रजिस्टर करने के लिए जरूरी कदम उठाते है। दिल्ली में घरेलू आया के रूप में काम करने वाली अधिकांश औरतों के पास दिल्ली वासी होने का सबूत नहीं है। ये सभी महिलाएं जो कार्यालयों में, दुकानों में, फैक्ट्रियों में, निर्माण क्षेत्रों में काम कर के दिल्ली की आर्थिक गतिविधियों और आर्थिक उपार्जन में बिना किसी अधिकारिक पहचान के भूमिका अदा करती है उनमें से अधिकांश दिल्ली की वोटर नहीं है पर ये महिलाएं दिल्ली को चलाने वाली महत्वपूर्ण ताकत हैं। दिल्ली में किराए पर रहने वाली आबादी के एक बड़े हिस्से के पास भी दिल्ली वासी होने का सबूत नहीं है।

राजधानी दिल्ली देश की राजधानी है। महिलाओं के लिए बस में फ्री यात्रा जैसी राहत के लिए भी कड़ी शर्तें लागू कर दिए जाने से दरअसल दुरुपयोग रोकने के नाम पर उपयोग ही दूभर कर देना होगा। सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम वेतन दिल्ली के अधिकांश मजदूरों को नहीं मिलता। महिला मजदूरों को पुरुषों से भी कम वेतन मिलता है। दिल्ली में आवश्यक खाद्य वस्तुओं दूध, तेल, सब्जी इत्यादि के दाम लगातार बढ़ते जा रहे हैं। बच्चों की शिक्षा के बढ़ते खर्च इत्यादि से जूझते हुए दिल्ली की सर्वसाधारण महिलाओं को फ्री बस यात्रा से महत्वपूर्ण राहत है। इस राहत के कारण यातायात के साधन पर बिना खर्च के अपने काम पर पहुंच कर थोड़े वेतन और आमदनी से वो किसी तरह जीवन यापन कर पा रही हैं। वास्तविक दिल्लीवासी का सबूत न होने के कारण बहुत बड़ी संख्याओं में महिलाओं को काम पर आने जाने में अपनी थोड़ी आमदनी का बड़ा हिस्सा बस के किराए में खर्च करना पड़ेगा।

भाजपा ने दिल्ली के चुनावी घोषणा पत्र में सभी महिलाओं के लिए कल्याणकारी योजनाओं को जारी रखने के साथ–साथ नई घोषणाएं की थी। अब जब अमल की बात आई है तो जांच पड़ताल के नाम पर जो सबसे ज्यादा जरूरतमंद हैं उनको ही इन सुविधाओं के लाभ से वंचित करने की कोशिश की जा रही है।

प्रगतिशील महिला संगठन दिल्ली सरकार से मांग करता है कि दिल्ली में सभी महिला यात्रियों के लिए फ्री बस टिकट के माध्यम से यात्रा करने की सुविधा को जारी रखा जाए।

**(प्रगतिशील महिला संगठन की दिल्ली कमेटी द्वारा जारी)**

# प्रमस द्वारा महिला विरोधी टिप्पणी का विरोध

प्रगतिशील महिला संगठन हाल इलाहाबाद हाईकोर्ट के निर्णय पर गहरा रोष व्यक्त करता है।

रिपोर्टों के अनुसार इस निर्णय में बलात्कार के आरोपी को इस आधार पर जमानत दी गई है की "लड़की ने अपने आप ही समस्या को न्योता दिया था और कथित बलात्कार के लिए वह स्वयं ही जिम्मेदार है"। न्यायधीश महोदय ने न केवल आरोपी को जमानत दी अपितु शिकायतकर्ता की 'नैतिकता और उसके स्वयं के कृत्य की सार्थकता' आदि के संबंध में आदेश में टिप्पणियां की। यह उनकी पितृसत्तात्मक मानसिकता को दिखलाता है।

महिलाओं पर यौन हिंसा के मामले में इलाहाबाद हाई कोर्ट से एक के बाद एक महिला विरोधी निर्णय आ रहे हैं जिनमें स्थापित कानूनी परिभाषाओं और सुप्रीम कोर्ट के निर्णयों को दरकिनार किया जा रहा है। महिला आंदोलन के कठिन संघर्षों से हासिल कानूनी अधिकारों को माननीय न्यायाधीश अपने पूर्वाग्रह के कारण शिकायतकर्ता महिलाओं को न केवल न्याय से विरक्त करते हैं बल्कि पूरे समाज में यह संदेश भेजा जाता है कि अगर महिलाएं न्यायिक लड़ाई लड़ेंगी तो उनको न्याय नहीं मिलेगा।

प्रगतिशील महिला संगठन इलाहाबाद उच्च न्यायालय के इस निर्णय को संवेदनहीन और गलत मानते हुए माननीय सुप्रीम कोर्ट से इस मामले में स्वत संज्ञान लेकर इस निर्णय को निरस्त करने की मांग करता है।'

प्रगतिशील महिला संगठन सुप्रीम कोर्ट से मांग करता है कि इलाहाबाद हाई कोर्ट को प्राथमिकता पर रखते हुए देश के सभी उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए विशेष जेंडर सेंसटाइजेशन कार्यक्रम चलाया जाए।

यह आदेश महिला आंदोलन के सामने एक बार फिर से यह चुनौती रख रहा है कि देश में व्यापक महिला आंदोलन ही लिखे कानूनों को लागू कराने की सुनिश्चितता कर सकता है।

**(प्रगतिशील महिला संगठन की दिल्ली कमिटी द्वारा जारी)**

# 'विश्व गुरु' की आर्थिक हकीकत

एस.एस. माहिल

संघी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी खोखले राष्ट्रवाद के झंडाबरदार देश को अतिमहाशक्ति बनाने की कोशिश कर रहे हैं। वह भारत को अतिमहाशक्ति कैसे बना रहे हैं ? दुनिया का सबसे बड़ा मेला महाकुंभ हमारे देश में हो रहा है। दुनिया का सबसे बड़ा मंदिर अयोध्या में राम मंदिर है। दुनिया की सबसे ऊंची मूर्ति वल्लभभाई पटेल की मूर्ति भारत में है। लेकिन इसका दूसरा पहलू भी है। दुनिया में सबसे ज्यादा भिखारी भारत में हैं। दुनिया में सबसे ज्यादा कुष्ठ रोग के मामले भारत में हैं। संक्रामक रोगों से होने वाली बीमारियों में भारत पहले नंबर पर है। भारत अपने पड़ोसी देशों पाकिस्तान, चीन, नेपाल, श्रीलंका और मालदीप आदि की तुलना में भूख सूचकांक में सबसे नीचे 111 वें स्थान पर है। भारत से नीचे युद्धग्रस्त अफगानिस्तान और अफ्रीकी सब–सहारा देश हैं। 130 करोड़ भारतीयों में से 83 करोड़ सरकार से मिलने वाले मुफ्त अनाज पर निर्भर हैं। धार्मिक स्वतंत्रता के मामले में देश 104 वें स्थान पर है। अभिव्यक्ति और लेखन की स्वतंत्रता की सूची में 180 देशों में से इसका स्थान 159 वां है। क्या भारत एक अतिमहाशक्ति है ?

मोदी सरकार ने दावा किया था कि तथाकथित आजादी के 100 साल पूरे होने तक भारत दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। आर्थिक विशेषज्ञों का मानना है कि इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए हर साल सकल घरेलू उत्पाद में 12–14 प्रतिशत की बढ़ोतरी जरूरी है, लेकिन जो आंकड़े सामने आ रहे हैं, उनके मुताबिक भारत सरकार ने 2024–25 के लिए सकल घरेलू उत्पाद की 8 प्रतिशत की विकास दर तय की थी। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने इस वित्त वर्ष के लिए भारत की विकास दर 6.4 प्रतिशत रहने का अनुमान लगाया है। भारतीय रिजर्व बैंक ने जीडीपी विकास दर 7.2 प्रतिशत रहने का अनुमान लगाया था, लेकिन अपने अनुमान को संशोधित कर 6.5 प्रतिशत कर दिया। रेटिंग एजेंसी मॉर्गन एंड स्टेनली ने ताजा आंकड़ों के मद्देनजर भारत की अर्थव्यवस्था के अपने पूर्वानुमान को 6.7 प्रतिशत से संशोधित कर 6.3 फीसदी कर दिया है। इसी तरह केयर रेटिंग्स ने इसका अनुमान 6.8 प्रतिशत लगाया था, लेकिन उसने भी अपने अनुमान को संशोधित कर 6.5 प्रतिशत कर दिया। सरकार द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में सबसे निराशाजनक प्रदर्शन औद्योगिक क्षेत्र का रहा है। इस वृद्धि का अनुमान 9.3 प्रतिशत लगाया गया था, लेकिन वास्तविक वृद्धि केवल 6 फीसदी रही है।

लेकिन इस निराशाजनक प्रदर्शन के बावजूद इस हकीकत को खुले तौर पर स्वीकार करने के बजाय झूठे तर्कों के साथ मोदी को महान बताने की कोशिश की जा रही है। उनका तर्क है कि भारत की अर्थव्यवस्था अपने सुस्त प्रदर्शन के बावजूद दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था है। चीन की अर्थव्यवस्था की विकास दर 4.9 प्रतिशत है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था की विकास दर 2.01 प्रतिशत है, जबकि भारत की विकास दर 6.5 प्रतिशत है। यानी यह दुनिया की दो सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं से भी ज्यादा तेजी से बढ़ रही है। अगर प्रतिशत को एक तरफ रख दें और देखें कि तीनों देश के सकल घरेलू उत्पाद में मात्रा के हिसाब से कितनी वृद्धि हुई है, तो तस्वीर कुछ इस तरह उभरती है– चीन के सकल घरेलू उत्पाद में 895 बिलियन अमेरिकी डॉलर की वृद्धि हुई। अमेरिका में 787 बिलियन डॉलर की वृद्धि हुई, जबकि भारत की अर्थव्यवस्था में सिर्फ 256 बिलियन डॉलर की वृद्धि हुई। भारत की जीडीपी वृद्धि चीन की वृद्धि का 28.6 प्रतिशत है और अमेरिका की वृद्धि का 32.52 प्रतिशत है। इसलिए किसी को यह नहीं मान लेना चाहिए कि आंकड़ों में हेरा–फेरी करके वास्तविकता को छुपाया जा सकता है।

आइए समझते हैं– आसन्न मंदी की जड़ क्या है ? हम हमेशा से यही कहते आए हैं कि इसका मूल कारण मांग में कमी है, जबकि शासकों की स्थिति आपूर्ति में सुधार के लिए कदम उठाने की रही है। भारत सरकार और वित्त मंत्री लगातार रिजर्व बैंक पर रेपो रेट और मूल ब्याज दर कम करने का दबाव बनाते रहे, लेकिन बढ़ती महंगाई के कारण बैंक ने सरकार की इच्छा पूरी नहीं की। आरबीआई गवर्नर शशिकांत दास सेवानिवृत हो चुके हैं और सरकार ने राजस्व सचिव संजय मल्होत्रा को गवर्नर नियुक्त किया है और अब निर्मला सीतारमण की इच्छा पूरी हो सकती है, लेकिन इससे अर्थव्यवस्था की बीमारी दूर नहीं होगी, क्योंकि संकट आपूर्ति का नहीं बल्कि मांग का है। दुनिया भर में साम्राज्यवादी देशों के बाजार के लिए तीव्र भूख के कारण और खासकर ट्रंप के सत्ता में आने और उनके टैक्स दबाव के कारण विश्व बाजार में भारत के लिए बहुत अधिक संभावनाएं नहीं हैं। मांग की मुख्य गुंजाइश घरेलू बाजार में है, लेकिन घरेलू बाजार में लोगों की क्रय शक्ति को झटका लगा है और यह बहुत सीमित है। इसका प्रमाण सरकार द्वारा निजी अंतिम उपभोग पर दिए गए आंकड़े हैं, कोविड के बाद यह खपत तेजी से बढ़ी थी, जो कोविड के दौरान इसके गिरने का नतीजा थी। लेकिन नवंबर में जारी सरकारी आंकड़ों के अनुसार इस वित्त वर्ष में निजी खपत में वृद्धि केवल 7 प्रतिशत है।

लोगों की उपभोग/क्रय शक्ति में कमी आने के दो प्रमुख कारण हैं। पहला कारण यह है कि मेहनतकश लोगों की मजदूरी लगभग स्थिर अवस्था में है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार 2017 में ग्रामीण मजदूरों की औसत दैनिक मजदूरी 138 रुपए प्रतिदिन थी और 2023 में औसत मजदूरी 158 रुपए प्रतिदिन थी। इसका मतलब है कि 6 साल में केवल 20 रूपए की वृद्धि हुई है, जो हर साल मात्र 3 रुपए 33 पैसे की वृद्धि है। यह वार्षिक वृद्धि 2.01 प्रतिशत है, जो लगभग नगण्य है। कामकाजी महिलाओं की दैनिक मजदूरी तो इससे भी रु. 40 कम है। इसी तरह निर्माण श्रमिकों की औसत दैनिक मजदूरी 2017 में 176 रूपए थी, जो 2023 में बढ़कर 205 रुपए हो गई। 6 साल में रु. 29 की वृद्धि हुई, जो प्रतिवर्ष 4.34 रुपए है। यह मामूली वृद्धि केवल 2.75 प्रतिशत होती है। इसमें निर्माण क्षेत्र में महिला श्रमिकों की दैनिक मजदूरी पुरुषों के मुकाबले 45 रुपए कम है। कामकाजी लोगों की लगभग स्थिर मजदूरी कम क्रय शक्ति का एक बड़ा कारण है।

इसका दूसरा कारण महंगाई है। इसके कारण श्रमिक अपने पास मौजूद राशि से पहले से भी कम खरीद पाते हैं। रिजर्व बैंक ने महंगाई दर को 4 प्रतिशत तक सीमित रखने का लक्ष्य रखा था, लेकिन 2012 से 2024 तक औसत महंगाई दर 6.8 प्रतिशत रही है। इसमें खाद्य पदार्थों की महंगाई भी दहाई अंकों में रही है। खाद्य पदार्थों की कीमतों में बढ़ोतरी अभी 9 प्रतिशत है। इससे कामकाजी लोगों की कुल कमाई पेट भरने में चली जाती है और उनके पास दूसरी चीजें खरीदने के लिए कुछ नहीं बचता। पेट भरने के बाद दो बुनियादी जरूरतें हैं स्वास्थ्य और शिक्षा। यह दोनों ही इस समय की बुनियादी जरूरतें हैं। मोदी सरकार के दौरान स्वास्थ्य क्षेत्र पर खर्च में सालाना 4 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस तरह शिक्षा क्षेत्र पर खर्च में भी सालाना 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

हमारे देश में बेरोजगारी का आंकड़ा रोजगार कार्यालय में दर्ज आंकड़ों के अनुसार दर्ज किया जाता है। कर्मचारियों की कमी और अन्य कारणों से रोजगार कार्यालयों का बुरा हाल है। इसके बिना नौकरी मिलने की कोई उम्मीद ना होने से कोई भी रोजगार कार्यालयों में नहीं जाता। फिर भी इसके अनुसार भी बेरोजगारी 35 प्रतिशत है। आमतौर पर ग्रामीण बेरोजगारी, अव्यक्त बेरोजगारी और अर्ध बेरोजगारी के आंकड़े उसमें शामिल नहीं होते हैं। बेरोजगारों की क्रय शक्ति तकनीकी रूप से शून्य है। इसलिए उच्च बेरोजगारी दर जनता की क्रय शक्ति को खत्म करती है और परिणाम स्वरुप घरेलू बाजार सिकुड़ जाता है। सकल घरेलू उत्पादन में गिरावट का यह भी एक कारण है।

ना केवल उत्पादन कम हो रहा है, बल्कि सरकार को विदेशी मुद्रा भंडार भी खोना पड़ रहा है। एक रिपोर्ट के अनुसार 4 अक्टूबर 2024 से 3 जनवरी 2025 तक विदेशी मुद्रा भंडार 701 अरब डॉलर से घटकर 634 अरब डालर रह गया। भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार 10 जनवरी 2025 तक 536 अरब डॉलर का मुद्रा भंडार था, लेकिन अगले एक सप्ताह में मुद्रा में 9.46 अरब डॉलर की कमी आ गई। भले ही विदेशी मुद्रा भंडार पर्याप्त हों और विदेशी भुगतान की समस्या उत्पन्न न होने वाली हो, लेकिन जिस तरह से विश्व बाजार में तेल की कीमतें बढ़ रही हैं और अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने रूस से सस्ता तेल खरीदने पर भारत पर प्रतिबंध लगाने की धमकी दी है उससे भारत का विदेशी भुगतान बिल बढ़ जाएगा, क्योंकि वह अपनी तेल जरूरतों के लिए तेल आयात पर निर्भर है। दूसरी ओर यदि विदेशी मुद्रा भंडार में इसी तरह की कमी आती रही, तो किसी न किसी स्तर पर भुगतान की समस्या उत्पन्न होना असंभव नहीं है।

इसका एक कारण यह भी है कि डॉलर के मुकाबले रुपया लगातार गिर रहा है। रुपया ऐसे गिर रहा है जैसे कोई वस्तु ऊंचाई से लुढ़क कर रसातल में जा रही हो। एक डॉलर की कीमत 86 रुपए को पार कर 87 रुपए प्रति डॉलर पर पहुंच रही है। अब विनिमय की कोई निश्चित दर नहीं रही। डॉ मनमोहन सिंह ने वित्त मंत्री रहते हुए मुद्राओं के विनिमय की फ्लोटिंग रेट प्रणाली लागू की थी। यानी मुद्रा की कीमत बाजार के हिसाब से तय होती थी। मुद्रा की विनिमय दर बाजार के हवाले करने के बाद भी सरकार के पास बाजार में हस्तक्षेप करने का रास्ते बचते हैं। मुद्रा समेत किसी भी वस्तु की मांग और आपूर्ति से निर्धारित मानी जाती है। इसलिए वस्तु/मुद्रा की कीमत को गिरने से रोकने के दो ही रास्ते बचते हैं– या तो उसकी मांग बढ़ा दी जाए या फिर उसकी आपूर्ति घटा दी जाए। मांग बढ़ना सरकार के हाथ में नहीं है। वह सिर्फ मुद्रा की आपूर्ति घटा सकती है। भारतीय रिजर्व बैंक इस मामले में भी हस्तक्षेप करता रहा है। वह बाजार में रुपया मुद्रा की मात्रा घटाने के लिए डॉलर के बदले रुपए खरीदता रहा है। गवर्नर शशिकांत दास ने सरकार के आग्रह के बावजूद इस नीति को जारी रखा और तर्क दिया कि अगर ऐसा नहीं किया गया, तो अंतरराष्ट्रीय बाजार में रुपया औंधे मुंह गिरेगा। यह स्पष्ट है कि देश की मुद्रा के अवमूल्यन के साथ–साथ विदेशी कर्ज और विदेशी देनदारियां भी उसी हिसाब से बढ़ती हैं, लेकिन दूसरी ओर इस नीति के कारण विदेशी मुद्रा भंडार में कमी आई है। आरबीआई गवर्नर के पद से शशिकांत दास के सेवानिवृत होने के बाद नवनियुक्त गवर्नर मल्होत्रा ने कहा कि विदेशी मुद्रा भंडार की स्थिति को देखते हुए रिजर्व बैंक मुद्रा बाजार में आगे हस्तक्षेप नहीं करेगा। इस नीति के क्रियान्वयन से क्या स्थिति बनती है यह तो आने वाला समय ही बताएगा।

इसके अलावा हमारे देश के वित्तीय बाजारों से पूंजी का बाहर जाना भी महत्वपूर्ण है। भारत में मांग बढ़ने और उत्पादन घटने के लिए घरेलू बाजार के लिए सब्सिडी की चीनी सरकार की योजना के क्रियान्वयन के कारण विदेशी कंपनियां वित्तीय बाजार से पैसा निकल रही हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार अक्टूबर 2021 से जून 2022 तक भारत के वित्तीय बाजार से 48 अरब डॉलर बाहर जा चुके हैं। कहा जा सकता है कि यह आंकड़ा पुराना है, लेकिन यह घटना वर्तमान में भी हो रही है। अक्टूबर 2024 में भारत के वित्तीय बाजार से 7.9 अरब डॉलर वापस जा चुके हैं। विदेशी कंपनियां अपने पैसे उन देशों में ले जा रही हैं, जहां उन्हें वित्तीय बाजार में अपने शेयर और बांड बेचकर जल्दी और अधिक मुनाफा कमाने की संभावना है। इससे भारत के वित्तीय बाजारों सहित बिक्री में तेजी आई है, जिसके कारण वित्तीय बाजार में काफी हलचल है। सकल घरेलू उत्पाद विशेष रूप से औद्योगिक उत्पादन के निराशाजनक आंकड़ों और वित्तीय बाजार से पूंजी की वापसी के कारण शेयर बाजार में लगातार गिरावट आ रही है। सितंबर 2024 से जनवरी 2025 तक के पिछले 4 महीनों में शेयर बाजार में 12 प्रतिशत की गिरावट आई है। इससे निवेशकों, खासकर छोटे निवेशकों के 19 लाख करोड रुपए डूब गए हैं। हालांकि जब शेयर बाजार चढ़ भी रहा होता है, तो जरूरी नहीं है कि यह अर्थव्यवस्था की स्थिति को दर्शाता हो। बल्कि इसमें सट्टेबाजी की भूमिका भी

*(शेष पृष्ठ 8 पर)*

# नये वक्फ कानून 2025 का विरोध करो; यह अल्पसंख्यकों के खिलाफ हमला है

अल्पसंख्यकों खासकर मुसलमानों, जो सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय हैं, के खिलाफ हमलों को और तेज करते हुए आरएसएस–भाजपा ने संसद के दोनों सदनों में वक्फ संशोधन अधिनियम बहुमत के बल पर पारित कर लिया है। इस अधिनियम का शीर्षक एकीकृत वक्फ प्रबंधन, सशक्तिकरण, दक्षता और विकास अधिनियम है, हालांकि इसका मुख्य उद्देश्य ना तो सशक्तिकरण, ना दक्षता और ना ही उस समुदाय का विकास करना है, जिससे यह संबंधित है। इसका मुख्य उद्देश्य मुसलमानों से काफी वक्फ संपत्तियों का प्रबंध छीन कर उन्हें सरकार के नियंत्रण में लाना है। यह कानून 1995 के पहले के कानून (जिसमें 2013 के संशोधन किया गया था) को बदलने के लिए है। 1995 का अधिनियम स्वयं इस विषय पर 1913 के अधिनियम से शुरू होने वाले और 1923 और 1954 में इसी तरह के अभ्यास से गुजरने वाले कई अधिनियमों के बाद आया था।

आरएसएस–भाजपा वक्फ अधिनियम ने समुदाय– मुसलमानों के प्रतिनिधियों द्वारा वक्फ संपत्तियों के प्रबंधन को समाप्त कर दिया है। यह बोर्ड के सभी सदस्यों को सरकार द्वारा नामित करने का प्रावधान करता है। इस प्रकार समुदाय के संबंधित सदस्यों द्वारा उनके चयन की संभावना समाप्त हो गई है। 2013 में संशोधित 1995 अधिनियम के अनुसार बोर्ड के 11 सदस्यों में से केवल 3 को ही नामित किया जाना था। इसके अलावा यह राज्य बोर्डों में अन्य समुदायों (गैर मुस्लिम) के दो व्यक्तियों को शामिल करने का आदेश देता है। यह स्पष्ट है कि पूरी योजना मुस्लिम समुदाय से वक्फ संपत्तियों का पूरा नियंत्रण छीन कर सरकार के हाथों में देने की है।

यह अधिनियम न केवल प्रभावित समुदाय को विश्वास में लिए बिना और उनकी वैध चिंताओं का समाधान किए बिना पारित किया गया है, बल्कि यह संविधान के प्रावधानों का भी उल्लंघन करता है। अनुच्छेद 26 में प्रावधान है कि प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय या उसके किसी भी वर्ग को अधिकार होगा–

(क) धार्मिक और धर्मार्थ उद्देश्य के लिए संस्थानों की स्थापना और रखरखाव करने का,

(ख) धर्म के मामलों में अपने स्वयं के मामलों का प्रबंध करने का,

(ग) चल और अचल संपत्ति का स्वामित्व और अधिग्रहण करने का,

(घ) कानून के अनुसार ऐसी संपत्ति का प्रशासन करने का।

यह अधिकार सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के अधीन है। परंतु नया अधिनियम समुदाय से प्रबंधन का नियंत्रण छीन लेता है और स्पष्ट रूप से प्रावधान करता है कि बोर्ड के 11 सदस्यों में से केवल 4 मुस्लिम होने आवश्यक हैं। इस प्रकार बोर्ड के 7 सदस्य गैर मुस्लिम हो सकते हैं, इस प्रकार बोर्ड के मुस्लिम सदस्यों की राय को उनके अपने धार्मिक मामलों के प्रबंधन में आसानी से नजरअंदाज किया जा सकता है।

आरएसएस–भाजपा ने वक्फ संपत्तियों की दक्षता, सशक्तिकरण और विकास के बारे में अपनी झूठी चिंता का हवाला दिया है। यह इस तथ्य से बिल्कुल स्पष्ट है कि अकुशलता और कुप्रबंधन सभी धार्मिक संप्रदायों की बंदोबस्ती संपत्तियों के प्रबंधन में व्याप्त हो सकता है और होता भी है, लेकिन मुसलमानों को ही इस तरह के व्यवहार के लिए चुना गया है, जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है। अनुच्छेद 14 यह अधिकार प्रदान करता है "राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या भारत क्षेत्र में कानूनों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा"। हालांकि वक्फ बोर्डों के पास काफी संपत्तियां हैं, लेकिन अन्य धार्मिक संप्रदायों के पास भी वास्तव में बहुत अधिक प्रॉपर्टी है, लेकिन उनके प्रबंधन में दक्षता और उनके सशक्तिकरण और विकास के बारे में आरएसएस–भाजपा सरकार को कोई चिंता नहीं है। मुसलमानो के लिए यह कितनी असाधारण और बेहतर टालने योग्य चिंता है ! हिंदू मंदिरों और मठों के प्रबंधन बोर्डों में अल्पसंख्यकों को शामिल करना अनिवार्य नहीं है।

वास्तव में वक्फ बोर्ड, ऐतिहासिक मस्जिदों, दरगाहों, दुकानों, कब्रिस्तानों, ईदगाहों और लाखों एकड़ जमीन का प्रबंध करते हैं। सच्चर कमेटी की रिपोर्ट का हवाला देते हुए कहा गया है कि 6 लाख एकड़ से ज्यादा जमीन वक्फ संपत्ति है। इनमें शैक्षणिक संस्थान और समाज कल्याण के अन्य संस्थान भी शामिल हैं। अल्पसंख्यक मामलों के मंत्रालय की वेबसाइट के मुताबिक 3 लाख 56 हजार 354 वक्फ स्टेट, 8 लाख 72 हजार 843 अचल वक्फ संपत्तियां और 16 हजार 716 चल वक्फ संपत्तियां हैं। इनका प्रबंधन 32 वक्फ बोर्ड करते हैं।

इसकी तुलना में तमिलनाडु में मंदिरों और मठ की जमीन 4.78 लाख एकड़ और आंध्र प्रदेश में हिंदू बंदोबस्ती जमीन 4 लाख एकड़ है। इस तरह इन दोनों राज्यों में ही हिंदू बंदोबस्ती के तहत 8.78 लाख एकड़ जमीन है।

अल्पसंख्यकों को निशाना बनाकर उनके धार्मिक मामलों का नियंत्रण उनसे छीन लेना स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान बनी आम सहमति के विपरीत है कि धार्मिक मामलों का प्रबंध समुदाय के सदस्यों द्वारा किया जाना चाहिए और उनके मामलों के प्रबंधन में कोई भी बदलाव उनकी सहमति से होना चाहिए। इस कानून को आगे बढ़ते हुए इस स्पष्ट धर्मनिरपेक्ष सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है।

हिंदू राष्ट्र की ओर अपने अभियान में आरएसएस–भाजपा मुसलमानों से शुरू करके अल्पसंख्यकों के धार्मिक मामलों पर हमला कर रही है। यह आरएसएस के मुखपत्र आर्गेनाइजर में एक लेख में चर्च की संपत्तियों पर हमले से स्पष्ट है। हालांकि लेख को वेबसाइट से हटा दिया गया है, लेकिन यह सत्तारूढ़ दल की मंशा को स्पष्ट करता है।

हाल ही में बोधगया मंदिर अधिनियम पर भी विवाद हुआ, जो महाबोधी मंदिर परिसर के प्रबंधन के लिए समिति में हिंदू बहुमत का प्रावधान करता है। अधिनियम में 9 सदस्यों की एक समिति का प्रावधान है, जिसमें 4 हिंदू व 4 बौद्ध और जिला मजिस्ट्रेट पदेन अध्यक्ष होंगे और यदि जिला मजिस्ट्रेट गैर हिंदू है, तो उसे किसी हिंदू को अध्यक्ष के रूप में नामित करना होगा, जिससे समिति में हिंदू बहुमत सुनिश्चित होगा। बौद्धों ने इसके खिलाफ आवाज उठाई है।

दरअसल यह नया कानून देश के शहरी क्षेत्रों में प्रमुख स्थानों पर स्थित वक्फ संपत्तियों पर केंद्रित है। इनमें से कुछ पर अतिक्रमण है। 'मिड डे' में एक टिप्पणी के अनुसार आरएसएस–भाजपा का दावा है कि सरकारी संपत्तियों को मनमाने ढंग से वक्फ घोषित किया गया है, जबकि सच्चाई इसके विपरीत है जैसा कि जस्टिस राजेंद्र सच्चर समिति की रिपोर्ट में बताया गया है कि ... "सरकारों और उनकी एजेंसियों द्वारा कब्जे... के कारण वक्फ के पोषित और धर्मार्थ उद्देश्यों का बड़े पैमाने पर हनन हुआ है"। 5 राज्यों और अकेले दिल्ली में सच्चर समिति ने 604 वक्फ संपत्तियों को सरकार के अनाधिकृत कब्जे में गिना है। (7 अप्रैल, एजाज अशरफ)।

इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए यह तय करना कि कोई संपत्ति वक्फ है या नहीं, संयुक्त सचिव स्तर के ऊपर के सरकारी अधिकारी पर छोड़ दिया गया है। इसके अलावा, वक्फ संपत्तियों का सर्वेक्षण करने के लिए सर्वेक्षण आयुक्त के स्थान पर जिला कलेक्टर को नियुक्त किया गया है अर्थात खुद सरकारी अफसर तरू करेंगे कि सम्पत्ति सरकार की है या वक्फ की। वक्फ संपत्तियों का निर्धारण अपने हाथों में लेते हुए सरकार ने इस अधिनियम के माध्यम से आगे यह प्रावधान किया है कि अधिकारी के आदेश के खिलाफ अपील पर वक्फ न्याधिकरण के निर्णय अंतिम नहीं होंगे (जैसा की 1995 के अधिनियम के तहत था) और पीड़ित उच्च न्यायालय जा सकते हैं। यह वक्फ संपत्तियों को लंबे मुकदमों में बांधने का एक नुस्खा है। इसके अलावा यह अधिनियम उन व्यक्तियों के खिलाफ 12 साल के बाद मुकदमा दायर करने की भी अनुमति नहीं देता है जिन्होंने वक्फ संपत्तियों पर कब्जा कर रखा है। मुकदमों पर यह 12 साल की रोक हिंदू बंदोबस्ती के लिए नहीं है।

यह अधिनियम भारत के सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय मुसलमानों पर हमला है और यही आरएसएस–भाजपा का मुख्य इरादा भी है। आरएसएस–भाजपा दावा कर रही है कि गैर मुसलमानों को शामिल करना केवल प्रशासन में दक्षता के लिए है ना कि मुसलमानों के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप करने के लिए। लेकिन इस दलील में कोई दम नहीं है। क्या एक बड़े मुस्लिम समुदाय वाले देश में प्रशासनिक मामलों का प्रबंध करने के लिए सक्षम मुसलमान नहीं है। दूसरे गैर हिंदुओं को शामिल करके हिंदू बंदोबस्ती की भूमि और संपत्तियों के प्रबंधन के लिए इस प्रशासनिक दक्षता की मांग क्यों नहीं की जाती है ? क्या इनका भी कुशलता पूर्वक प्रबंधन नहीं किया जाना चाहिए ? यह उनकी दुर्भावना को छिपाने का एक तरीका है, लेकिन पर्दा बहुत पतला है।

विभिन्न संप्रदायों के धार्मिक बंदोबस्तों के पास कृषि भूमि है, लेकिन सरकार द्वारा इन जमीनों पर किराएदारों के अधिकारों को सुरक्षित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया है, जिनमें से अधिकांश हिंदू बंदोबस्तों के हैं। यह आरएसएस–भाजपा सरकार की चिंता नहीं है, जो दूसरों की संपत्तियों पर अतिक्रमण करने वाले अमीरों का पक्ष लेती है।

आरएसएस–भाजपा इस कानून को धर्मनिरपेक्षता का दावा करने वाली पार्टियों जदयू, टीडीपी, आरएलडी, एलजीपी–आरवी के समर्थन के बिना पारित नहीं कर सकती थी, लेकिन इन पार्टियों की मुख्य चिंता सत्ता में बने रहना है और इसके लिए वे अपने कथित सिद्धांतों की परवाह नहीं करते।

मुस्लिम वक्फ पर इस हमले का विरोध किया जाना चाहिए और इसे उसी रूप में देखा जाना चाहिए जैसा कि यह है– अल्पसंख्यकों खासकर मुसलमानों को हाशिए पर धकेलने का प्रयास है, न केवल उन पर, उनकी संपत्तियों उनके खान–पान की आदतों पर, बल्कि उनके धार्मिक मामलों और उनकी धार्मिक बंदोबस्ती संपत्तियों पर भी हमला किया जा रहा है। आरएसएस–भाजपा और उनके सहयोगी अक्सर मुसलमानों पर शारीरिक हमले करने के अलावा उनकी दुकानों और कारोबार आदि का आर्थिक बहिष्कार करने का आह्वान करते हैं। इस हमले को समुदाय के खिलाफ आम हमले के रूप में देखा जाना चाहिए। और यह समुदाय के खिलाफ हमला अल्पसंख्यकों और समाज के अन्य उत्पीड़ित वर्गों पर हमले का हिस्सा है। यह केंद्र सरकार का नेतृत्व कर रही हिंदुत्ववादी फासीवादी ताकतों के हमले का हिस्सा है।

इसलिए सभी प्रगतिशील, लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष ताकतों और संगठनों को इस हमले का एकजुट विरोध करना चाहिए। इस हमले का पर्दाफाश करने और इसका विरोध करने के लिए एक देशव्यापी अभियान चला कर इसका प्रतिकार किया जाना चाहिए।

(सीपीआई (एमएल)- न्यू डेमोक्रेसी द्वारा 7 अप्रैल 2025 को जारी। यह लेख अंग्रेजी पत्रिका न्यू डेमोक्रेसी में प्रकाशित लेख का हिन्दी अनुवाद है।)

## पत्रिका के नियमित प्रकाशन के लिए सभी पाठकों से अनुरोध

- *पत्रिका के लिए लेख व रिपोर्ट नियमित रूप से भेजें।*
- *पत्रिका के बारे में अपने सुझाव भेजें।*
- *कृपया पत्रिका की प्रतियों की राशि समय पर पहुंचाएं।*
- *लेख, रिपोर्ट, सुझाव तथा राशि पत्रिका के पते पर भेजें।*

# भाषा और नफरत का अंधापन

एस.के.

भाषा लोगों को जोड़ती है। मशहूर लेखक रवीश सिद्दी ने उर्दू भाषा के बारे में कहा है,

उर्दू जिसे कहते हैं तहजीब का चश्मा है,

वह शख्स मोहज्जिब है, जिसको यह जुबां आई।

(उर्दू नाम की भाषा संस्कृति और सभ्यता की दृष्टि है, जो इस भाषा को जानता है वह निश्चित रूप से एक सभ्य व्यक्ति है)

भाषा संस्कृति से जुड़ी है और यह भूगोल से बहुत करीब से जुड़ी हुई है। जिस वक्त में हम रह रहे हैं उसके दुखद प्रतिबिंब में हम अब उन प्रयासों के गवाह हैं, जो किसी भाषा के अस्तित्व को स्वीकार करने से साफ इनकार करते हैं। नफरत का अंधापन उस भाषा को बदनाम कर रहा है, जिसे कभी संस्कृति और सभ्यता की दृष्टि के रूप में सराहा जाता था। भारत के एक बड़े राज्य के मुख्यमंत्री ने इसे कट्टरपंथी (कठमुल्लों) की भाषा कह कर फटकार लगाने की हिम्मत की है। और यह विधानसभा के पटल पर हुआ! एक कवि और एक राजनेता ने मुख्यमंत्री को यह जवाब दिया–

उर्दू वह भाषा है, जिसके प्रेम ने राम प्रसाद को कवि श्बिस्मिलश बना दिया। उर्दू वह भाषा है जिसके प्रेम ने रघुपति सहाय को कवि श्फिराक गोरखपुरीश बना दिया। बृज नारायण श्चकबस्तश कवी बन गए। पंडित हरिश्चंद्र श्अख्तरश कवि बन गए। संपूर्ण सिंह कालरा श्गुलजारश कवि बन गए। उर्दू वह भाषा है जिसमें भगत सिंह ने अपने पत्र लिखे। उर्दू वह भाषा है, जिसे गांधी जी ने खुद हिंदुस्तानी के रूप में स्वीकार किया। उर्दू वह भाषा है जिसकी नेहरू और पटेल ने प्रशंसा की है। उर्दू वह भाषा है जिसने हमें श्इंकलाब जिंदाबादश का नारा दिया। उर्दू का भाषा है जिसने हमें श्जय हिंदश का नारा दिया। उर्दू वह भाषा है जिसने हमें प्रेम के गीत और क्रांति के गीत दिए। और अब हमारे पास एक प्रांत का मुख्यमंत्री है, जो इसे कठमुल्लों की भाषा कह रहा है। कोई उन्हें बताएं यह कट्टरपंथियों की भाषा नहीं, बल्कि कवि आनंद नारायण मुल्ला की भाषा है।

मुल्ला बना दिया है इसे भी महाज-ए-जंग,

इक सुलह का पयाम थी उर्दू जुबान कभी।

(यहां तक कि इसे भी युद्ध के मैदान में बदल दिया गया है। उर्दू भाषा कभी शांति का संदेश थी)–आनंद नारायण मुल्ला।

मुख्यमंत्री के उर्दू के खिलाफ 4 मिनट के भाषण में उसी भाषा के 9 शब्द शामिल थे, जिसका मुख्यमंत्री उपहास कर रहे थे। हालांकि यह विडंबनापूर्ण है, लेकिन यह आकस्मिक नहीं है। यह सिर्फ एक सबूत है कि उर्दू उस भाषा का हिस्सा है, जिसे भारत के लोग बोलते हैं।

उर्दू भारत के लिए कोई विदेशी या पराई भाषा नहीं है। इसकी उत्पत्ति और जड़ें भारत में हैं और यह धरती के रंगों और सुगंधों के साथ पनपी है। यह भारत के लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। देश के इतिहास से थोड़ा बहुत परिचय भी इसे पूरी तरह स्पष्ट कर देगा, लेकिन हमारे पास एक दुखद स्थिति है, जहां सत्ता की सीढ़ियों पर अज्ञानता, अहंकार और घृणा के नशे में चूर लोग बैठे हैं। और हम उनसे तथ्यात्मक इतिहास के बारे में जानकारी की उम्मीद नहीं कर सकते।

उर्दू दुनिया में 10वीं सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है, जिसे 230 मिलियन लोग बोलते हैं। यह भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में मान्यता प्राप्त 22 भाषाओं में से एक है। यह हिंदी, बंगाली, तेलुगू, तमिल और गुजराती के बाद भारत में छठी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। उर्दू की उत्पत्ति वर्तमान मेरठ डिवीजन के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में हुई है, जो 12वीं शताब्दी के आसपास पुरानी दिल्ली से सटा हुआ क्षेत्र है।

श्उर्दूश शब्द की जड़ें फारसी में है और इसका अर्थ श्शिविरश (खेमा) होता है। यह शिविरों में सैनिकों के साथ लोगों की बातचीत से एक भाषा के रूप में उत्पन्न हुई और विभिन्न क्षेत्रों में विकसित हुई। श्उर्दूश पदनाम केवल 18वीं शताब्दी के दौरान दिखाई दिया और इसे विभिन्न नाम से संदर्भित किया गया– हिंदी, हिंदुस्तानी, हिंदवी, देहलवी, लाहौरी, रेखघ्ता और लश्करी। यह एक स्थापित तथ्य है कि उर्दू एक भारतीय भाषा है, जिसकी उत्पत्ति और जड़ें इसी देश में हैं। भाषाई और साहित्यिक दोनों स्तरों पर कई अध्ययन हैं, जो अन्य भारतीय भाषाओं पर उर्दू के प्रभाव और इसके विपरीत का दस्तावेजीकरण करते हैं।

गजल एक साहित्यिक रूप है, जो फारसी के प्रभाव में आया, लेकिन उसने भारत में विशिष्टता हासिल की। उर्दू गजल का भारतीय साहित्य में एक महान योगदान है और यह देखना दिलचस्प है कि यह कैसे विकसित हुई और प्रमुखता तक पहुंची। ऐसा माना जाता है कि शास्त्रीय उर्दू शायरी की जीवंत परंपरा दक्कन में विकसित गजल की शैली और भाषा के उत्तर की राजधानी दिल्ली में स्थानांतरण के साथ शुरू होती है। मोहम्मद वली गुजरात में पैदा हुए और दक्कन में रहने लगे और बाद में दिल्ली चले गए। उन्होंने उर्दू साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उर्दू साहित्य में वली का ऐतिहासिक महत्व निर्विवाद है। उन्होंने दिल्ली के कवियों को कविता के माध्यम के रूप में अपनी मातृभाषा की संभावनाओं से अवगत कराया। इससे फारसी की प्रतिष्ठा को गहरा झटका लगा। अब उर्दू के वर्चस्व के लिए मंच तैयार हो गया था (एन एंथॉलजी आफ क्लासिकल उर्दू लव लिरिक्स, मैथ्यूज एंड शेंकल)। अब्दुल हलीम शरर ने कहा था श्उर्दू भाषा की उत्पत्ति दिल्ली में हुई और इसकी शायरी दक्कन में शुरू हुई। उर्दू गजल ने अपनी उपमाओं, रूपकों, छवियों और प्रतीकों– लैला और मजनू, शीरीं और फरहाद, शमा और परवानां, बुल–बुल, गुल, साकी आदि को साहित्य में लाया।

19वीं सदी के उत्तरार्ध में, 1857 के भारतीय विद्रोह के बाद औपनिवेशिक शासन की स्थापना हुई, जो कई सामाजिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक परिवर्तनों और साहित्य पर उनके प्रभाव का काल था। सर सैयद अहमद खान के तत्वाधान में अलीगढ़ आंदोलन आधुनिकता की ओर बढ़ने का संकेत है। अल्ताफ हुसैन हाली ने उर्दू साहित्य में आधुनिकता के अग्रदूत के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने सामाजिक वास्तविकता और कविता के बीच के अंतर को पहचाना और ऐसी कविता का आह्वान किया, जो शब्द और अर्थ दोनों में प्रकृति या प्रयोग के अनुरूप हो। उन्होंने कविता की भाषा के लिए कई सुधारों का प्रस्ताव रखा। उन्होंने लिखा, श्प्रेम और प्रेम (इश्क–ओ–आशिकी) की परमानंद समृद्धि के दिनों के लिए उपयुक्त थे। अब वह समय बीत चुका है। आनंद की रात बीत चुकी है और भोर हो चुकी है। अब कलिंगरा और बिहाग (राग) बजाने का समय नहीं है। अब जोगिया (राग) गाने का समय है।श हालांकि इस पर विस्तार से चर्चा करना संभव नहीं है, लेकिन साहित्यिक आंदोलन और भाषा तथा साहित्यिक रूपों की भूमिका तथा विभिन्न क्षेत्रों में आधुनिकता के आगमन पर होने वाली बहसों का अध्ययन करना दिलचस्प होगा। तेलुगु साहित्य में श्बोलचालश की भाषा के इस्तेमाल के लिए आंदोलन तथा गुरजादा अप्पा राव जैसे लेखकों की रचनाएं इस मामले में एक दिलचस्प उदाहरण हैं।

इसके बाद के घटनाक्रमों में प्रगतिशील लेखक संघ का उदय तथा इसकी महत्वपूर्ण भूमिका को साहित्यिक इतिहास का एक गौरवशाली अध्याय माना जा सकता है। उर्दू साहित्य में प्रगतिशील लेखकों द्वारा लाए गए परिवर्तन उनके द्वारा उठाए गए सवाल तथा तीखी बहसें समाज को समझने तथा सामाजिक परिवर्तन में साहित्य की भूमिका का आकलन करने में अधिक अंतर दृष्टि प्रदान करती है। प्रगतिशील लेखक संघ की उपलब्धियां तथा असफलताएं अमूल्य सबक प्रदान करती हैं। यहां यह ध्यान देने योग्य बात है कि उर्दू साहित्य ने अन्य भाषाओं के साहित्य को प्रभावित किया है तथा यह वास्तव में अन्य भाषाओं के साहित्य से प्रभावित था। यह इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि भाषा तथा धर्म का उपयोग अब सभी स्तरों पर लोगों को विभाजित करने के लिए किया जा रहा है।

उपनिवेशवाद, विभाजन तथा सांप्रदायिकता साहित्य को विषाक्त कर रही है। उर्दू को एक श्विदेशीश भाषा और एक विशिष्ट धार्मिक समुदाय की भाषा के रूप में चित्रित करने के प्रयास नए नहीं हैं। साहित्यिक इतिहासकारों ने उर्दू और हिंदी को दो अलग–अलग भाषाओं के रूप में विभाजित करने के प्रयासों का दस्तावेजीकरण किया है। भाषा के लिए लिपि के उपयोग का प्रश्न विवाद बन गया और 19वीं शताब्दी के दौरान इसने एक सांप्रदायिक रूप ले लिया। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों ने विभाजन को बढ़ावा देने के लिए इसे एक राजनीतिक और सांप्रदायिक मुद्दे में बदल दिया। वर्ष 1800 में कोलकाता में स्थापित फोर्ट विलियम कॉलेज और इसके पहले प्रिंसिपल ने विभाजन को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नतीजतन छात्रों को उर्दू और हिंदी के रूप में दो अलग–अलग लिपियां (फारसी और देवनागरी) में गद्य का अध्ययन करना पड़ा। राजा शिवप्रसाद ने 1875 में अपनी व्याकरण की पुस्तक में दोहराया कि हिंदी और उर्दू में स्थानीय भाषा के स्तर पर कोई अंतर नहीं है। उन्होंने कहा श्बेतुकी बातें डॉक्टर गिलक्रिस्ट के समय के मौलवियों और पंडितों से शुरू हुईं, जिन्हें ऊपरी भारत की आम बोलचाल की भाषा का व्याकरण बनाने का काम सौंपा गया था, लेकिन उन्होंने दो व्याकरण बना दिए... इसका बुरा नतीजा यह हुआ कि स्थानीय भाषा का एक स्कूली व्याकरण होने के बजाय... हमारे पास दो अलग–अलग और असंगत कक्षा की किताबें हैं। एक मुसलमान और कायस्थ लड़कों के लिए और दूसरी ब्राह्मण और बनियों के लिए।श बंटवारा, उसके बाद की घटनाओं और उसके बाद के घटनाक्रमों ने विभाजन को और बढ़ा दिया है।

1969 में गालिब की शताब्दी के अवसर पर लिखी गई साहित्य लुधियानवी की मार्मिक कविता त्रासदी को दर्शाती है,

जिन शहरों में गूंजी थी गालिब की नवां बरसों

उन शहरों में अब उर्दू बेनाम-ओ-निशां ठहरी

आजादी-ए-कामिल का ऐलान हुआ जिस दिन

माश्तूब जुबान ठहरी गद्दार जुबान ठहरी

(वो शहर जहां सालों तक गालिब की आवाज गूंजती रही, उन शहरों में उर्दू का नामोनिशान नहीं बचा। जिस दिन से आजादी की घोषणा हुई, भाषा को कुचल दिया गयाय यह देशद्रोही बनकर खड़ी है।)

उर्दू भाषा और इसकी कविता को विभाजित करने के प्रयासों के बावजूद आज भी वह है। भाषा और भाषा बोलने वाले लोगों के खिलाफ नफरत फैलाने के प्रयासों के बीच निम्नलिखित बातों पर जोर देने की जरूरत है–

– उर्दू एक भारतीय भाषा है और भारत के साहित्य और संस्कृति का एक अभिन्न अंग है।

– उर्दू की एक समृद्ध विरासत है और यह अन्य भाषाओं को प्रभावित करने के साथ–साथ अन्य भाषाओं से प्रभावित होकर विकसित हुई है। दक्कन साहित्य ने उर्दू कविता और भाषा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

– प्रगतिशील लेखकों का आंदोलन उर्दू भाषा के साहित्यिक इतिहास में गौरवशाली अध्याय बना हुआ है और उसने भारतीय साहित्य को समृद्ध किया है।

फैज अहमद फैज ने निम्नलिखित पंक्तियां एक अलग संदर्भ में लिखी हैं, लेकिन वे उस क्षण की बात करती हैं, जहां हम नफरत से अंधे लोगों द्वारा किए गए प्रयासों को फिर से जीवंत होते हुए देखते हैं।

हम कहें वहां अजनबी इतनी मदरसों के बाद,

फिर बनेंगे आशना कितनी मुलाकातों के बाद,

कब नजर में आएंगी बे-दाग सब्जे की बहार,

खून के धब्बे धुलेंगे कितनी बरसातों के बाद।

(इतने सत्कारों के बाद भी हम अजनबी ही रहे, हमें फिर से परिचित कराने में और कितनी मुलाकातें होंगी, हम कब देखेंगे हरे–भरे खेतों की बेदाग खिलखिलाहट, खून के धब्बे धोने में कितनी बारिश लगेगी।)

भाषा का उपहास करने, लोगों को बांटने के इन घिनौने प्रयासों का मुकाबला करने की जरूरत है। हमारी भाषा में प्रेम की बात होनी चाहिए। उसे व्यक्त करने के लिए उर्दू के अलावा कौन सी भाषा बेहतर है ?

## 139वें मई दिवस के अवसर पर इफ्टू की राष्ट्रीय कमेटी का मजदूर वर्ग से आह्वान!

**मजदूर वर्ग को गुलाम बनाने वाले केंद्र सरकार द्वारा लाए गए 4 लेबर कोड को निरस्त करने के लिए संघर्ष को तेज करो!**

**सरकार को मौजूदा श्रम कानूनों को लागू करने के लिए मजबूर करो!**

**ठेका, आउटसोर्सिंग और स्कीम मजदूरों को स्थाई करने के लिए संघर्ष करो!**

**साम्राज्यवादी पूंजी पर रोक लगाओ। मेहनत करने के लिए सीमाएं पार करने वाली श्रम शक्ति को बेड़ियों से आजाद करो। प्रवासी मेहनतकशों को जबरन वापस भेजना बंद करो!**

यूरोप में पूँजीपति वर्ग ने सामंतवाद को नष्ट किया और औद्योगिक क्रांति का नेतृत्व किया। एक नये औद्योगिक मजदूर वर्ग का उदय हुआ। एक ऐसी तकलीफदेह परिस्थिति बनी जहां मजदूरों को सूर्योदय से सूर्यास्त तक मशीनों की तरह मशीनों पर काम करना पड़ता था एवं वे एक यांत्रिक जीवन जी रहे थे। मार्क्स के जीवनकाल के दौरान यूरोपीय मजदूर वर्ग ने सबसे पहले काम के घंटों में कमी की मांग की थी। पेरिस कम्यून की हार और भयानक दमन के बाद, यूरोप के मजदूर वर्ग के कष्टों के सबसे अंधकारमय दौर में, अमेरिकी मजदूर वर्ग प्रकाश की किरण बन गया। परिणामस्वरूप, 1886 में काम के घंटे कम करने के लिए पूंजीपति वर्ग के खिलाफ मजदूर वर्ग के विद्रोह का केंद्र शिकागो था! छह मजदूरों की शहादत और चार नेताओं को फांसी के साथ इस विद्रोह ने इतिहास रचा। 1889 में, एंगेल्स की पहल पर, सोशलिस्ट इंटरनेशनल ने 1 मई को अंतर्राष्ट्रीय मजदूर दिवस घोषित किया। तब से मजदूर वर्ग '1 मई को संघर्ष के दिन के रूप में मनाता है'। शिकागो के शहीदों और मजदूरों के अधिकारों के लड़ते हुए शहीद हुए अन्य शहीदों को क्रांतिकारी श्रद्धांजलि।

मई दिवस के संघर्ष की भावना के साथ, दुनिया और भारत के मजदूर वर्ग ने अपने अधिकारों, सुविधाओं और वेतन के लिए लड़ाई लड़ी। आज देश में जो श्रम कानून हैं, वे मजदूरों द्वारा खून बहाने और कुर्बानियां देने का परिणाम हैं!

मोदी सरकार का फासीवादी शासन मजदूरों, किसानों और अन्य उत्पीड़ित तबकों के लिए अभिशाप बन गया है। 'देशभक्ति, स्वदेशी, राष्ट्रवाद, मेक इन इंडिया, अच्छे दिन, विकसित भारत' जैसे नारों की आड़ में सरकार सरकारी उद्योगों, प्राकृतिक संसाधनों और राष्ट्रीय संपत्तियों को मुख्यतः बहुराष्ट्रीय और घरेलू कॉरपोरेट को औने – पौने दाम पर बेच रही है। मोदी सरकार कॉरपोरेट के निवेश की रक्षा करने और उनके मुनाफे को अधिकतम करने के लिए मोदी सरकार कॉरपोरेट् कंपनियों के सीईओ (मुख्य प्रबंधक) की तरह व्यवहार कर रही है।

चार लेबर कोड़ों के पारित होने से पहले ही केंद्र सरकार ने एसईजेड (विशेष आर्थिक क्षेत्र), स्टार्टअप और बड़े मॉल को श्रम कानूनों का पालन किए बिना कार्य करने की अनुमति दे दी थी। इन्फोसिस, एलएंडटी, जिंदल, अडानी और अंबानी अपने अध्यक्षों और मुख्य कार्यकारी अधिकारियों के माध्यम से 70 से 90 घंटे के कार्य सप्ताह के पक्ष में मनोवैज्ञानिक युद्ध लड़ रहे हैं। जैसे – जैसे कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और तकनीकी विकास मानव श्रम को कम कर रहे हैं, तो काम के घंटे कम किए जाने की जरूरत है। यदि किसी समाज को प्रतिदिन 5 करोड़ श्रम घंटों की आवश्यकता है, तथा यदि करोड़ों मजदूर उपलब्ध हैं, तो 5 घंटे या उससे कम का कार्य दिवस लागू किया जाना चाहिए ताकि सभी के लिए रोजगार के अवसर हों। पूंजीवाद इसके विपरीत काम करता है – वो काम के घंटे बढ़ाकर बेरोजगारी बढ़ाता है।

मोदी सरकार महामारी की आड़ में चार लेबर कोड लेकर आई। यदि ये लागू हुए तो मजदूरों के संगठन बनाने के अधिकार, हड़ताल करने के अधिकार सहित कानूनी अधिकार छीन लिए जाएंगे, कल्याणकारी लाभ समाप्त कर दिए जाएंगे और मजदूर पुनः बंधुआ मजदूर समान बन जाएंगे।

मोदी सरकार इन लेबर कोड़ों को लागू करने के लिए राज्य सरकारों पर दबाव डाल रही है। उसने प्रतिकूल प्रतिक्रिया के डर से 2024 के चुनावों से पहले इसे लागू करना स्थगित कर दिया था। उसके बाद उसने कहा कि वह सत्ता में लौटने के 100 दिनों के भीतर इन कोड़ों को लागू कर देगी। फिर 1 अप्रैल 2025 की तारीख तय की गई। वह भी बीत चुकी है। कुछ भाजपा शासित राज्यों ने इन्हें लागू करने के लिए पहले ही नियम बना लिए हैं। कुछ गैर–भाजपा राज्य भी नियम बना रहे हैं या सशर्त क्रियान्वयन की बात कर रहे हैं। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सभी शासक पार्टियां मजदूर वर्ग के अधिकारों को छीनते हुए कॉरपोरेट को लाभ पहुंचाने पर तुली हुई हैं।

अंग्रेजों के देश छोड़ने के 77 साल बाद भी, 'देश में मजदूर वर्ग के लिए नौकरी की कोई सुरक्षा नहीं है'। सरकारी उद्योगों में स्थायी मजदूरों के स्थान पर ठेका एवं आउटसोर्स मजदूरों को काम पर रखा जा रहा है। *इस मामले में केन्द्र और राज्य सरकारें एक ही दिशा में आगे बढ़ रही हैं।* वे स्कीम मजदूरों को मजदूर ही नहीं मानते। देश के असंगठित क्षेत्र के 90% मजदूरों के लिए अभी भी कानूनी अधिकार और लाभ लागू नहीं हैं।

मोदी सरकार ने मजदूर वर्ग और अन्य लोगों से किए गए वायदे पूरे नहीं किए हैं। इसके विपरीत, अपनी जायज मांगों के लिए लड़ रहे लोगों का उत्पीड़न किया गया है। विरोध को अपराध बना दिया गया है। अल्पसंख्यकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, अम्बेडकरवादियों, क्रांतिकारी कम्युनिस्टों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को 'शहरी नक्सल' कहकर यूएपीए और एनआईए के तहत अपराधिक केसों में फंसाया जा रहा है। वक्फ अधिनियम के नाम पर अल्पसंख्यकों की संपत्ति पर हमला किया जा रहा है। खनिज संपन्न जंगल की भूमि और संसाधनों को कॉरपोरेट को सौंपने के लिए ऑपरेशन कगार के नाम पर आदिवासियों पर हमले किए जा रहे हैं। जातिवादी और सांप्रदायिक षडयंत्रों द्वारा संघर्षरत जनता को विभाजित किया जाना जारी है।

अमेरिका और यूरोप में नस्लवाद बढ़ गया है। सात देशों में अति–दक्षिणपंथी सरकारें सत्ता में आ गयी हैं। काम की तलाश में अपने देश छोड़ने वाले प्रवासी मजदूर आज अमेरिका और यूरोप में खतरे का सामना कर रहे हैं। ट्रम्प सरकार भारतीयों को जबरन वापस भेज रही है और मोदी सरकार उनके सामने झुक रही है। ट्रम्प प्रशासन द्वारा जंजीरों में जकड़े वापस भेजे गए 90% भारतीय श्रमिक बहुसंख्यक समुदाय से थे।

इस 139वें मई दिवस पर, आइए हम मांग करें :

- 4 लेबर कोड वापस लो!
- संघर्ष से हासिल किए गए मौजूदा श्रम कानूनों को लागू करो!
- आउटसोर्सिंग, ठेका और स्कीम मजदूरों को स्थायी करो!
- प्रवासी भारतीयों को जबरन वापस भेजना बंद करो। श्रम के आने जाने पर कोई बेड़ियों नहीं हों।

इफ्टू की राष्ट्रीय कमेटी मजदूर वर्ग से आह्वान करती है कि वो फिलिस्तीन के लिए न्याय के साथ खड़े हों। हम गाजा पर अमेरिका के समर्थन के साथ इजरायल द्वारा किए जा रहे हमलों की निंदा करते हैं।

*(शेष पृष्ठ 8 पर)*

## का. रवि की 9वीं बरसी पर तेलंगाना तथा आंध्र प्रदेश में कार्यक्रम

**सी.पी.आई. (एम-एल)- न्यू डेमोक्रेसी की केन्द्रीय कमेटी के सदस्य तथा पूर्व आंध्र पंदेश तथा बाद में तेलंगाना राज्य कमेटी के सचिव का. रायला सुभाष चंद्र बोस (रवि) की नौंवी बरसी पर आंध्र पंदेश तथा तेलंगाना में कार्यक्रम किये गये। (बायें) जंगारेड्डीगुउेम (पश्चिम गोदावरी) आंध्र प्रदेश में 9 मार्च को आयोजित स्मृति सभा के पहले की गई रैली का दृश्य तथा (दायें) खम्मम (तेलंगाना) में 11 मार्च को की गई रैली के बाद आयोजित स्मृति सभा का दृश्य।**

# दिल्ली : आपरेशन कगार के खिलाफ सभा

प्रेस क्लब ऑफ इंडिया में 18 मार्च 2025 को मानवाधिकार संगठन जन हस्तक्षेप द्वारा आयोजित बुद्धिजीवियों, अध्यापकों, छात्रों, वकीलों व नागरिक समाज के अन्य विशिष्ट लोगों की बैठक में केंद्र सरकार से मांग की गई है कि छत्तीसगढ़ में चलाए जा रहे 'ऑपरेशन कगार' को तत्काल रोका जाए और सुरक्षा बलों को हटाया जाए तथा आदिवासियों के खिलाफ दायर किए गए फर्जी मुकदमे वापस लिए जाएं। छत्तीसगढ़ में हाल के वर्षों में हुई सभी मुठभेड़ों और मारे गए आदिवासियों के मामलों की सुप्रीम कोर्ट के पीठासीन जज की अध्यक्षता में न्यायिक जांच हो और दोषियों के खिलाफ कार्रवाई की जाए। जल, जमीन, जंगल से संबंधित देसी और विदेशी कॉरपोरेट कंपनियों से किए गए सभी समझौतों को रद्द किया जाए।

जन हस्तक्षेप द्वारा आयोजित सभा में 'ऑपरेशन कगार और छत्तीसगढ़ में मानवाधिकारों की स्थिति' विषयक चर्चा में आदिवासी अधिकार कार्यकर्ता हिमांशु कुमार, दिल्ली विश्वविद्यालय की प्रोफेसर और नागरिक अधिकार कार्यकर्ता नंदिनी सुंदर, सुप्रीम कोर्ट के सीनियर एडवोकेट कोलिन गोंसाल्वेस और जेएनयू में शिक्षक एवं जन हस्तक्षेप के संयोजक डॉ विकास बाजपेई ने अपने विचार व्यक्त किए। इससे पूर्व वरिष्ठ पत्रकार व जन हस्तक्षेप के सहसंयोजक अनिल दुबे ने परिचर्चा के लिए विषय का प्रारूप पेश किया।

आदिवासी अधिकार कार्यकर्ता हिमांशु कुमार ने कहा कि कोई भी देश अपने नागरिकों पर बमबारी नहीं कर सकता। यह संयुक्त राष्ट्र संघ व अन्य अंतर्राष्ट्रीय नियमों का स्पष्ट दिशा निर्देश है, लेकिन छत्तीसगढ़ में कॉरपोरेट घरानों की तिजोरी भरने के लिए सुरक्षा बल आदिवासियों के खेतों, घरों और गांवों पर बमबारी कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि आज वहां की जमीनी स्थिति यह है कि आदिवासियों पर हो रहे अत्याचारों की बात उठाने वालों पर ही अदालतें कार्रवाई करती हैं। अपने मामले का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि सुप्रीम कोर्ट ने उन पर जुर्माना और सजा का प्रावधान किया। उन्होंने बताया कि छत्तीसगढ़ की जेलों में यौन हिंसा की शिकार महिलाओं की बहुत बड़ी संख्या है। इसका उल्लेख आदिवासी कार्यकर्ता सोनी सोरी ने कई जगहों पर किया है। उन्होंने कहा कि एक–एक किलोमीटर की दूरी पर बड़ी संख्या में पैरा मिलिट्री फोर्स के जवान तैनात हैं।

प्रोफेसर नंदिनी सुंदर ने कहा कि मौजूदा युद्ध का यह मॉडल बहुत ज्यादा दिनों तक नहीं चलेगा। छत्तीसगढ़ में हमला जारी है, लेकिन वह मैदानों की तरफ भी पहुंच गया है। जिसे हमने सीएए–एनआरसी और तीन कृषि कानून के रूप में देखा है। जनता के आंदोलन ने और फिर एक वर्ष तक चले किसान आंदोलन ने उसे पराजित भी किया है। उन्होंने कहा कि ऑपरेशन ग्रीन हंट के तहत व्यापक नरसंहार का दौर शुरू हुआ था, लेकिन उस समय कुछ खबरें भी आ जाया करती थीं। उसके बाद 2016 में बड़े पैमाने पर आदिवासियों पर हमले की घटनाएं हमने देखीं। आज बड़े पैमाने पर सुरक्षा बलों के कैंप उन्हीं इलाकों में सबसे ज्यादा लगाए जा रहे हैं, जहां अदानी और कॉरपोरेट कंपनियों की खदानें हैं। उन्होंने कहा कि मूल आदिवासी बचाओ अधिकार मंच जो आदिवासियों के लिए आवाज उठाता था, उसे प्रतिबंधित कर दिया गया है। केवल जामिया, भीमा कोरेगांव व अन्य मामलों में ही लोग जेलों में नहीं हैं, बल्कि बड़ी संख्या में आदिवासी भी यूएपीए के तहत जेलों में कैद हैं। इसलिए इन सब परिस्थितियों के बारे में विचार करना होगा। आज आदिवासी इलाकों में बड़े–बड़े हाईवे बन रहे हैं और आदिवासी अंदर गांवों और जंगलों में अंदर की तरफ धकेले जा रहे हैं इन हाईवे पर कॉरपोरेट द्वारा खनिज संपदा की ढुलाई करने वाले बड़े–बड़े ट्रक चल रहे हैं। इससे आदिवासियों का आज विस्थापन ही नहीं हो रहा है, बल्कि उनकी संस्कृति, भाषा और परिवेश पर भी हमला हो रहा है।

सीनियर एडवोकेट कोलिन ने कहा कि छत्तीसगढ़ में माओवाद के खिलाफ लड़ाई नहीं है। सब कुछ वहां की जमीन और खनिज संपदा की लूट के लिए हो रहा है। इसके लिए आदिवासियों को बर्बर ढंग से मारा और भगाया जा रहा है। इस संदर्भ में उन्होंने दांतेवाड़ा में फैक्ट फाइंडिंग के लिए गई एक टीम का उल्लेख किया, जहां 150 से अधिक महिलाएं आई थीं। इनमें से 70 उत्पीड़ित महिलाओं ने वहां की स्थिति का विवरण रिकॉर्ड कराया था। छत्तीसगढ़ पीयूसीएल की वेबसाइट पर ये सारे वीडियो मौजूद हैं। उन्होंने एक वीडियो क्लिप भी सभा में दिखाई, जिसमें महिलाएं बता रही हैं कि आदिवासियों को उनके खेतों, घरों और गांवों से बाहर करने के लिए सुरक्षा बल किस तरह के अत्याचार कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि वहां की जमीनी स्थिति यह है कि पैरामिलिट्री फोर्स की वहीं सबसे ज्यादा तैनाती है, जहां खनन परियोजनाएं हैं। सरकार कॉरपोरेट के लिए एजेंट की तरह काम कर रही है। बर्बरता का यह एक नया भयानक दौर है। आदिवासियों के खिलाफ अमित शाह और कॉरपोरेट मीडिया का प्रोपेगेंडा जारी है और न्यायपालिका केवल मौन ही नहीं है बल्कि उसका समर्थन है।

डॉ विकास ने कहा कि छत्तीसगढ़ में खनिज संपदाओं की लूट और आदिवासियों के नरसंहार पर शासक वर्गों के विपक्षी राजनीतिक दलों का विरोध नहीं हैं। संसद में भी विपक्ष खामोश है। देश में भय का वातावरण बनाया जा रहा है। ऐसे में अब जनता को ही देखना होगा कि वह इस हालात से कैसे और किस रास्ते से निपट सकती है। यही नहीं मानवाधिकार और लोकतंत्र पसंद कार्यकर्ताओं को भी अब समझना होगा कि वह इस तरह के सवालों के लिए एकजुट हों और विरोध का स्वरूप तय करें। उन्होंने कहा कि यह देखने की बात है कि हाल के वर्षों में जेलों में कैदियों की संख्या इतनी ज्यादा कैसे बढ़ गई। स्थिति निरंतर बद से बदत्तर हो रही है। उन्होंने कहा कि ऑपरेशन कगार के खिलाफ पंजाब, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में विरोध प्रदर्शन हुए हैं, जो स्वागत योग्य है।

वरिष्ठ पत्रकार अनिल दुबे ने चर्चा के लिए विषय प्रस्तुत करते हुए कहा कि दशकों से सरकारें जल, जमीन, जंगल और खनिज संपदाओं की कारपोरेट लूट के लिए आदिवासियों को विस्थापित करती रही हैं। आरएसएस–भाजपा के सत्ता में आने के बाद से लंबे संघर्षों से प्राप्त वन और आदिवासी संरक्षण कानूनों को कमजोर या समाप्त किया गया है। इससे पूरे क्षेत्र में अशांति बढ़ी है। इस संदर्भ में केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय की 2008 की 'कमेटी आन स्टेट एग्रेरियन रिलेशंस एंड अनफिनिश्ड टास्क ऑफ लैंड रिफॉर्म्स' रिपोर्ट में बताया गया था कि छत्तीसगढ़ में विकास परियोजनाओं के नाम पर बड़े पैमाने पर उपजाऊ जमीन और वन क्षेत्र उद्योगपतियों को दिया गया। इससे बड़े पैमाने पर आदिवासियों का विस्थापन हुआ, जिसने व्यापक अशांति को जन्म दिया है। रिपोर्ट के अनुसार 'कोलंबस के बाद जमीन की लूट की सबसे बड़ी कार्यवाही छत्तीसगढ़ में हुई है'। बावजूद इसके मनमोहन सिंह सरकार के गृहमंत्री पी चिदंबरम ने ऑपरेशन 'ग्रीन हंट' चलाया और आज 'ऑपरेशन कगार' के नाम पर आदिवासियों की हत्या और विस्थापन का सिलसिला जारी है, क्योंकि भाजपा की रमन सरकार या कांग्रेस की बघेल सरकार अथवा पुनः भाजपा की साय सरकार ने आदिवासियों पर हमले और तेज कर दिये हैं।

कॉ. कानूरी की 10वीं पुण्यतिथि के अवसर पर

# विशाखापत्तनम में साहित्यिक सभा

अरुणोदय सांस्कृतिक मंच के संस्थापक का. कानूरी की 10वीं पुण्यतिथि के अवसर पर विशाखापटनम में साहित्यिक सभा का आयोजन बीवीके कॉलेज के सामने, द्वारका नगर में सार्वजनिक पुस्तकालय के मिनी हॉल में किया गया।

अरुणोदय सांस्कृतिक संघ की राज्य सचिव कॉमरेड निर्मला ने साहित्यिक बैठक की अध्यक्षता की और अरुणोदय कलाकारों ने कॉमरेड कानूरी को श्रद्धांजलि देते हुए एक गीत गाकर कार्यक्रम की शुरुआत की।

मुख्य अतिथि के रूप में प्रसिद्ध कवि एवं गायक मित्र सिरिकी स्वामीनायडू ने व्याख्यान दिया। अरुणोदय सांस्कृतिक संघ के राज्य महासचिव कामरेड सन्नासेट्टी राजशेखर ने कामरेड कानूरी के लम्बे साहित्यिक सांस्कृतिक जीवन का विश्लेषणात्मक अनावरण श्रोताओं के समक्ष किया।

भारतीय नास्तिक समाज के राष्ट्रीय अध्यक्ष जीडी सरैया ने शहीदों के बलिदान का गुणगान करते हुए एक भावपूर्ण गीत गाया। आईएफटीयू के राज्य उपाध्यक्ष कॉमरेड वेंकटेश्वरलू ने कानुरी के कार्यों का विश्लेषण किया और वर्तमान कार्यों की व्याख्या की। अरुणोदय सांस्कृतिक महासंघ के जिला नेता का. रामकृष्ण ने वक्ताओं को आमंत्रित किया, जबकि अरुणोदय के जिला अध्यक्ष का. डी. एडुकोंडालु ने धन्यवाद दिया। अरुणोदय ने पूरे दिन क्रांतिकारी गीत गाए'।

का. कानूरी की स्मृति सभा में अरुणोदय की टीम

# पूर्व गोदावरी (आंध्र प्रदेश) : का. रमेश की बरसी पर स्मृति सभा

पूर्व गोदावरी जिले में सी.पी.आई.(एम-एल)-न्यू डेमोक्रेसी के प्रमुख नेता तथा दल नायक रहे का. रमेश की बरसी पर पूर्व गोदावरी के आदिवासी क्षेत्र में एक स्मृति सभा का आयोजन किया गया। सभा में सैकड़ों में आदिवासी गांवों से सैकड़ों महिलाओं तथा पुम्षों ने भाग लिया। वक्ताओं ने का. रमेश को श्रद्धांजली देते हुए आदिवासियों के संघर्षों को तेज करने का आवाह्न किया। वक्ताओं में ए.आई.के.एम.एस. के अखिल भारतीय कोषाध्यक्ष का. दुर्गा प्रसाद शामिल थे।

## हैदराबाद : आपरेशन कगार के खिलाफ धरना

अप्रैल 8 2025 को हैदराबाद में सी.पी.आई (एम–एल) न्यू डेमोक्रेसी की तेलंगाना राज्य कमेटी के नेतृत्व में आपरेशन कगार तथा छत्तीसगढ़ में आदिवासियों के जनसंहार के खिलाफ एक जन घरना किया गया। सी.पी.आई (एम–एल) न्यू डेमोक्रेसी के नेताओं तथा कार्यकर्ताओं के साथ ही विभिन्न राजनैतिक पार्टियों, जन अधिकार संगठनों तथा जन संगठनों के प्रतिनिधियों तथा बुद्धिजीवियों ने भाग लिया।

जन धरने का संबोधित करने वालों में प्रो. रमा मलकोटे, प्रो. कोदंडराम, प्रो. विनायक रेड्डी, वीक्षणम वेनुगोपाल, नागरिक अधिकार नेता जी. लक्ष्मण तथा नारायण राव, प्रो. कासिम कासिम शामिल थे। सी.पी.आई (एम–एल) न्यू डेमोक्रेसी नेता एस. वैंकटेश्वर राव, जे.वी. चलपति राव, ए. मधु, के, गोवर्धन तथा पी.ओ. डब्ल्यू, संध्या के साथ सी.पी.एम. के राज्य नेता जुलाकांती रंगारेड्डी, सी.पी. आई. नेता पाश्य पद्मा, सी.पी.आई (एम–एल) मास लाईन नेता के रमा, 'आप' के सुधाकर तथा कृष्णा प्रसाद, वीरासम रांकी, अरुण्सेदया विमलक्का, सामाजिक कार्यकर्ता सजया, टी.वी.वी. नागैया, ए.आई.टी.एफ. के मुरली कृष्णा शामिल थे।

वक्ताओं ने आपरेशन कगार को फौरन बंद करने की मांग के साथ विदेशी तथा घरेलू कारपोरेट को खनिज सम्पदा देने पर प्रतिबंध लगाने की मांग की।

**हैदराबाद 8 अप्रैल 2025। आपरेशन कगार के खिलाफ धरना। मंच पर पार्टियों के प्रतिनिघि तथा बुद्धिजीवी तथा संबोधित करते हुए सी.पी.आई.(एम-एल)-न्यू डेमोक्रेसी के राज्य प्रवक्ता का. जे.वी. चलपति राव**

## कोलकाता : गाजा में इजराइल द्वारा जनसंहार के खिलाफ प्रदर्शन

गाजा में अमेरिका समर्थित इजरायल द्वारा किए जा रहे जनसंहार को समाप्त करने की मांग करते हुए अमेरिकी दूतावास तक विरोध मार्च निकाला गया।

पिछले 18 महीनों से अमेरिका समर्थित इजरायल फिलिस्तीन में लगातार विनाश कर रहा है। युद्धविराम को तोड़ते हुए, वे जनसंहार के क्रूर कृत्य कर रहे हैं, जिसमें न तो महिलाओं, बच्चों और न ही वृद्धों को बख्शा गया है। कोई भी जगह नहीं है – अस्पताल, स्कूल, कॉलेज, शरणार्थी शिविर या धार्मिक स्थल – जहाँ इजरायल ने हमला न किया हो। गाजा को प्रभावी रूप से मौत की घाटी में बदल दिया गया है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, 50,000 से अधिक लोग मारे गए हैं, जिनमें 20,000 से अधिक बच्चे शामिल हैं। वास्तव में, यह संख्या बहुत अधिक होने की संभावना है। संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा सीधे समर्थित इस नरसंहार के बीच, फिलिस्तीन के लोग अपनी मातृभूमि की मुक्ति के लिए अपना संघर्ष जारी रखे हुए हैं।

हमारे देश में, केंद्रीय भाजपा सरकार विभिन्न तरीकों से जनसंहार करने वाले इजरायल राज्य के साथ खड़ी है और सहयोगात्मक संबंध बनाए हुए है।

8 अप्रैल को अमेरिकी दूतावास तक विरोध मार्च निकाला गया, जिसमें गाजा में जनसंहार को रोकने की मांग की गई, इजरायल के लिए अमेरिकी समर्थन का विरोध किया गया और भारत सरकार से इजराइल के साथ सभी संबंध तोड़ने का आह्वान किया गया। इस कार्यक्रम की शुरुआत सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी, एमकेपी, सीपीआई (एमएल) मास लाइन और पीसीसी सीपीआई (एमएल) ने की, जिसमें विभिन्न प्रगतिशील और लोकतांत्रिक ताकतों और व्यक्तियों ने भाग लिया।

जैसे ही जुलूस धर्मतला में लेनिन की प्रतिमा से अमेरिकी दूतावास की ओर बढ़ा, पुलिस ने बैरिकेड्स लगाकर सड़क को अवरुद्ध कर दिया। विभिन्न संगठनों के नेताओं ने वहां भाषण दिए। कॉमरेड आशीष दासगुप्ता ने सीपीआई (एमएल) न्यू डेमोक्रेसी की ओर से विचार रखे।

## मई दिवस पर इफ्टू का मजदूर वर्ग से आह्वान!

*(पृष्ठ 6 का शेष)*

इफ्टू की राष्ट्रीय कमेटी मजदूर वर्ग से आह्वान करती है कि वह निम्नलिखित मांगों पर एकताबद्ध संघर्ष का निर्माण करे:–

*सुप्रीम कोर्ट के फैसलों के अनुसार "समान काम के लिए समान वेतन" लागू करो।*

*सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की बिक्री बंद करो।*

*26000 रुपए मासिक न्यूनतम वेतन लागू करो।*

*सभी असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के लिए नौकरी की सुरक्षा, पी एफ, ई एस आई, पेंशन, इत्यादि कानूनी अधिकार लागू करो।*

**(इंडियन फेडरेशन आफ ट्रेड यूनियंस (इफ्टू) की राष्ट्रीय कमेटी द्वारा जारी)**

## 'विश्व गुरु' की आर्थिक हकीकत

*(पृष्ठ 3 का शेष)*

होती है। वैसे भी जब यह गिरता है, तो छोटे निवेशकों का पैसा साफ कर देता है। बैंकों की तरह बीमा कंपनियां, फाइनेंस कंपनियां भी मध्यम वर्ग की जेब से पैसा निकालने का जरिया हैं। अर्थव्यवस्था जितनी बढ़ रही है, उसका फायदा किसे हो रहा है ? यह भी एक बुनियादी सवाल है।

हम आम लोगों, मेहनतकश लोगों की आर्थिक स्थिति का वर्णन पहले ही कर चुके हैं। असल में इसका फायदा कॉरपोरेट को हो रहा है। वित्त वर्ष 2022–23 में कॉरपोरेट का मुनाफा 10 लाख 38 हजार करोड रुपए था। अगले वित्त वर्ष 2023–24 में यह बढ़कर 14 लाख 11 हजार करोड़ रूपया हो गया। एक साल में कॉरपोरेट मुनाफे में 3 लाख 23 हजार करोड रुपए की बढ़ोतरी हुई। दूसरी ओर केंद्र सरकार ने कारपोरेट की सेवा में लगे बैंकों की 3 लाख 79 हजार 144 करोड़ रुपए की देनदारी माफ कर दी। नरेंद्र मोदी के 10 साल के कार्यकाल में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने 16.11 लाख करोड़ रुपए माफ किए हैं, लेकिन मजदूरों और किसानों के कर्ज माफ करने पर चुप्पी साध रखी है। डॉक्टर जोहल जैसे विद्वान शोर मचाते हैं कि इससे बैंकों का प्रबंधन गड़बड़ा जाएगा।

ब

आखिर में, हम वही आते हैं, जहां से हमने शुरुआत की थी। जितना बड़ा कुंभ मेला, जितना बड़ा राम मंदिर और जितनी ऊंची मूर्ति, जीवन में ये भ्रम उतने ही शक्तिशाली होते हैं, परंतु इनका आधार अर्थव्यवस्था है। स्विट्जरलैंड के दावोस में वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम कॉन्फ्रेंस में द एंड लेमन ट्रस्ट के ब्यूरो द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत सरकार जनता के विश्वास के मामले में तीसरे दर्जे पर पहुंच गई है। 28 देशों के सर्वे में यह चीन, मैक्सिको, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका और ब्राजील से भी नीचे है। सर्वे में यह भी कहा गया है कि अमीरों का सरकार पर भरोसा अधिक है, जबकि आम लोगों का सरकार पर भरोसा बहुत कम है।

**If Undelivered, Please Return to**

**Pratirodh Ka Swar**
*Monthly*
Balmukand Khand,
Girinagar,
New Delhi-110019

**Hindi Organ of CPI(ML)-New Democracy**

R. N. 47287/87

Book Post

To

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी यतेन्द्र कुमार द्वारा बालमुकन्द खण्ड, गिरी नगर, नई दिल्ली-110019 से मुद्रित तथा प्रकाशित। सम्पादक : यतेन्द्र कुमार